KHAN GLOBAL STUDIES
KGS Campus, Sai Mandir, Musallahpur Hatt, Patna - 6
Mob : 8877918018, 875735880
BPSC - Polity
By : Karan Sir

फ्री स्पीच (वाक् स्वतंत्रता) का अधिकार (Right to free speech)

☞ लोक पदाधिकारियों के फ्री स्पीच अर्थात वाक स्वतंत्रता पर अतिरिक्त प्रतिबन्ध लगाने को लेकर सर्वोच्च न्यायलय ने यह निर्णय दिया कि भारतीय संविधान के अनुच्छेद 19(2) के तहत निर्धारित प्रतिबंधों के अलावा लोक पदाधिकारियों के फ्री स्पीच अर्थात वाक स्वतंत्रता पर कोई अतिरिक्त प्रतिबन्ध नहीं लगाया जा सकता है।

☞ इसके अतिरिक्त सर्वोच्च न्यायलय ने कुछ अन्य पहलुओं को भी शामिल किया जो निम्नलिखित हैं-

- किसी मंत्री के बयान

(किसी मंत्री के बयान भले ही आधिकारिक क्षमता से दिया गया हो) को सामूहिक जवाबदेही के सिद्धांत को लागू करके अप्रत्यक्ष रूप से सरकार का बयान घोषित नहीं किया जा सकता।

- अनुच्छेद 75(3) के तहत केंद्रीय मंत्री-परिषद लोक सभा के प्रति सामूहिक रूप से उत्तरदायी होती है। इसी प्रकार अनुच्छेद 164 (2) के अंतर्गत राज्य मंत्री- परिषद राज्य की विधान सभा के प्रति सामूहिक रूप से उत्तरदायी होती है।
- सुप्रीम कोर्ट ने कहा कि सामूहिक जवाबदेही मंत्रीपरिषद से व्यक्तिगत मंत्रियों तक जाती है, न कि इसके विपरीत अर्थात यह व्यक्तिगत मंत्रियों से मंत्री-परिषद् की ओर नहीं जाती है।

☞ अनुच्छेद 19 व 21 के तहत प्रदत्त मौलिक अधिकारों को राज्य या उसके संगठनों के अलावा अन्य व्यक्तियों के ऊपर भी लागू किया जा सकता है।

☞ किसी मंत्री द्वारा दिया गया केवल कोई बयान (भले ही वह नागरिकों के अधिकारों के संगत नहीं हो) संवैधानिक अपकृत्य (ज्वतज) के रूप में कार्रवाई योग्य नहीं हो जाता।

☞ हालांकि, यदि ऐसा बयान किसी लोक पदाधिकारी द्वारा चूक या लापरवाही का कारण बनता है, तो यह संवैधानिक अपकृत्य है।

☞ संवैधानिक अपकृत्य सरकार के किसी अभिकर्ता द्वारा अपने आधि कारिक सामर्थ्य में कार्य करते हुए, किसी व्यक्ति के संवैधानिक अधिकारों (विशेष रूप से मौलिक अधिकारों) का उल्लंघन है। ऐसे मामले में अदालत, पीड़ित को आर्थिक मुआवजा देने का आदेश दे सकती है।

क्या होता है फ्री स्पीच?

☞ मानवाधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा (UDHR) के अनुच्छेद 19 के अनुसार, हर किसी को स्वतंत्र रूप से अपने तरीके से अपनी राय व्यक्त करने का अधिकार है। फ्री स्पीच इसी अधिकार का विस्तार है जो किसी सेंसरशिप या कानूनी कार्रवाई के डर के बिना अपने विचारों तथा राय को स्वतंत्र रूप से अभिव्यक्त करने का कानूनी अधिकार है।

☞ फ्री स्पीच की आवश्यकता क्यों है और उस पर युक्ति युक्त प्रतिबन्ध लगाना क्यों जरुरी है इसे एक तालिका के माध्यम से दर्शाया गया है-

फ्री स्पीच की आवश्यकता

➢ **सरकार की जवाबदेहिता को बढ़ाना :** मीडिया संस्थान तथा नागरिक समाज संगठन समाज के सबसे महत्वपूर्ण मुद्दों पर रिपोर्टिंग करते हैं। इस प्रकार वे सरकार के कामकाज के संबंध में लोगों की धारणा का निर्माण करते हैं। साथ ही, वे सरकार को अधिक जवाबदेह बनाने में योगदान देते हैं।

➢ **लोगों की सक्रिय भागीदारी सुनिश्चित करना:** फ्री स्पीच अन्य मूल अधिकारों को मजबूती प्रदान करता है, जैसे- सम्मेलन करने की स्वतंत्रता । इस स्वतंत्रता का इस्तेमाल लोग सार्वजनिक निर्णयों को प्रभावित करने के लिए विरोध-प्रदर्शनों में करते हैं। साथ ही, इससे लोगों की भागीदारी को भी मजबूती मिलती है।

➢ **समानता को बढ़ावा देना:** अपने समुदाय द्वारा सामना किए जाने वाले मुद्दों के बारे में अभियान चलाया जा सकता है और उन पर लोगों से खुल कर बात की जा सकती है। ऐसा करके उन मुद्दों को उजागर किया जा सकता है और जनता का समर्थन प्राप्त किया जा सकता है। इससे मानवाधिकारों के हनन को समाप्त किया जा सकता है।

➢ **सामाजिक बदलाव और नवाचार के लिए आवश्यक:** फ्री स्पीच कलाकारों की रचनात्मकता की रक्षा करता है तथा उन्हें स्वतंत्र रूप से विचार करने एवं अपने विचारों को साझा करने में समर्थ बनाता है। रचनात्मकता में अकादमिक लेखन, थियेटर, कार्टून, दृश्य कला आदि शामिल हो सकते हैं।

- **विकास:** फ्री स्पीच विचारों की स्वतंत्रता के लिए आवश्यक है। ऐसा इसलिए क्योंकि कोई व्यक्ति दुनिया के बारे में तब तक एक स्वतंत्र दृष्टिकोण विकसित नहीं कर सकता है जब तक उसे दूसरों के साथ अपने अनुभवों या विश्वासों को साझा करने की अनुमति नहीं होगी और जब तक वह इस संबंध में विभिन्न विचारों से अवगत नहीं होगा कि क्या महत्वपूर्ण है और कौन से विश्वास सबसे अधिक सार्थक हैं।
- **आधारभूत इकाई:** फ्री स्पीच नागरिकों को दिए गए अन्य अधिकारों के आधार के रूप में कार्य करता है। उदाहरण के लिए, प्रेस की स्वतंत्रता जो बेहतर जागरूक जनता और मतदाताओं को तैयार करने में मदद करती है।

फ्री स्पीच पर प्रतिबंधों की आवश्यकता

- **देश की प्रभुता और अखंडता:** ऐसी वाक् या अभिव्यक्ति जो भारत के लिए खतरा हो सकती है, उसे अनुच्छेद 19(2) के तहत प्रतिबंधित किया जा सकता है।
- **देश की सुरक्षा:** देश की सुरक्षा अत्यधिक महत्वपूर्ण है। इसलिए देश की सुरक्षा को जोखिम में डालने वाली गतिविधियों पर उचित प्रतिबंध लगाना अत्यंत आवश्यक है।
- **विदेशी राज्यों के साथ मैत्रीपूर्ण संबंध:** देश की प्रतिष्ठा को खतरे में डालने वाले दुर्भावनापूर्ण कार्यों पर अंकुश लगाने और एक वैश्वीकृत दुनिया में अन्य देशों के साथ सकारात्मक संबंध बनाए रखने के लिए यह आवश्यक है।
- **लोक व्यवस्था, शिष्टाचार या सदाचार:** सार्वजनिक स्थानों पर अश्लील शब्दों के प्रयोग या अश्लील तस्वीरों की मार्केटिंग या उनके वितरण या उनके विज्ञापन पर रोक लगाने के लिए यह आवश्यक है। ऐसा इसलिए क्योंकि ये सामाजिक अशांति का कारण बन सकते हैं या किसी विशेष समुदाय या पूरे समाज के लिए असुविधा पैदा कर सकते हैं।
- **न्यायालय की अवमानना:** न्यायपालिका की गरिमा बनाए रखने और न्यायपालिका में जनता के विश्वास को बनाए रखने के लिए यह आवश्यक है। यह अनुच्छेद 129 (सुप्रीम कोर्ट) और अनुच्छेद 215 (हाई कोर्ट) के तहत एक दंडनीय अपराध है।
- मानहानि या अपराध के लिए उकसाने के संबंध में फ्री स्पीच किसी व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह को किसी अन्य व्यक्ति को अपराध करने के लिए उकसाने या सांप्रदायिक हिंसा या अशांति को बढ़ावा देने का अधिकार नहीं देती है। इसे संविधान (प्रथम संशोधन) अधिनियम, 1951 द्वारा जोड़ा गया था।

वाक् स्वतंत्रता से संबंधित भविष्य की राह-

- वाक् स्वतंत्रता से संबंधित भविष्य की राह को निम्न प्रकार से वर्गीकृत किया जा सकता हैं इसे एक आरेख के माध्यम से दर्शाया गया है-

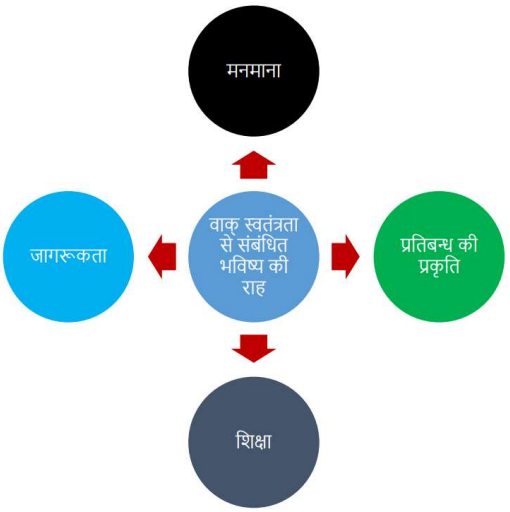

- **मनमाना :** अनुच्छेद 19(2) में उल्लेखित 'युक्तियुक्त निर्बंधन' वाक्यांश का मनमाना या ज्यादा इस्तेमाल नहीं होना चाहिए। अनुच्छेद 19(1)(a) से लेकर 19 (1) (g) तक गारंटीकृत स्वतंत्रताओं और सामाजिक नियंत्रण के बीच संतुलन बनाए रखा जाना चाहिए।
- **प्रतिबंध की प्रकृति:** फैसले पर पहुंचने से पहले न्यायालय को प्रतिबंध की तर्कसंगतता का निर्धारण करना चाहिए। अर्थात् व्यक्ति की स्वतंत्रता पर प्रतिबंध लगाने से पहले न्यायालय को प्रतिबंध की प्रकृति और कानून द्वारा निर्धारित प्रक्रिया पर विचार करना चाहिए।
- **शिक्षा:** यह फ्री स्पीच की समझ विकसित करने में मदद कर सकती है और इसके सार्थक उपयोग (जैसे अल्पसंख्यकों के अधिकारों की सुरक्षा, महिला सशक्तिकरण, शासन में पारदर्शिता आदि) को बढ़ावा दे सकती है।
- **जागरूकता:** सार्वजनिक प्राधिकारी, गैर-सरकारी संस्थाएं (NGOs), नागरिक समाज संगठन आदि फ्री स्पीच के संबंध में जागरूकता बढ़ाने में मदद कर सकते हैं।

हेट स्पीच (Hate Speech)

- उच्चतम न्यायलय ने राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली, उत्तराखंड और उत्तर प्रदेश की सरकारों से कहा है कि वे अपने अधिकार क्षेत्र में घटित होने वाले किसी भी हेट स्पीच संबंधी अपराध के खिलाफ स्वत: संज्ञान लेकर कार्रवाई करें।

अन्य संबंधित तथ्य

- सुप्रीम कोर्ट ने देश में नफरत फैलाने वाले भाषणों पर अंकुश लगाने की याचिका पर सुनवाई करते हुए दिल्ली, उत्तराखंड और उत्तर प्रदेश की सरकारों को अंतरिम निर्देश जारी किए, जिनमें शामिल हैं:
  - हेट स्पीच संबंधी मामले में स्वत: संज्ञान लेते हुए प्राथमिकी दर्ज की जानी चाहिए और आरोपियों के खिलाफ कानून के अनुसार कार्रवाई की जानी चाहिए।

❖ सुप्रीम कोर्ट ने कहा कि निर्देशों के अनुसार कार्य करने में किसी भी तरह के संकोच को अदालत की अवमानना के रूप में देखा जाएगा।

हेट स्पीच के बारे में

- विधि आयोग ने अपनी 267वीं रिपोर्ट में, हेट स्पीच की परिभाषा दी है। इसके अनुसार आम तौर पर नस्ल, नृजातीयता, जेंडर, लैंगिक रुझान, धार्मिक विश्वास और इसी तरह के संदर्भ में परिभाषित व्यक्तियों के समूह के खिलाफ घृणा के लिए उकसाने को हेट स्पीच कहा जाता है।
  - ❖ हालांकि, भारत में 'हेट स्पीच' की कोई विशेष कानूनी परिभाषा उपलब्ध नहीं है।

हेट स्पीच से जुड़े हुए मुद्दे-

- हेट स्पीच रूढ़िवादिता और पूर्वाग्रहों के सहारे भेदभाव, उपेक्षा और अनुचित व्यवहार को बढ़ावा देती है। इससे कुछ व्यक्तियों एवं समूहों का सामाजिक बहिष्कार होता है तथा उन्हें अवसरों से वंचित कर दिया जाता है।
- यह तनाव, चिंता, अवसाद पैदा कर तथा आत्म-सम्मान और अपनेपन की भावना को नुकसान पहुंचाकर व्यक्तियों के समग्र मनोवैज्ञानिक स्वास्थ्य को प्रभावित करती है।
- यह निश्चित व्यक्तियों या समुदायों के विरुद्ध हिंसात्मक कृत्य करने के लिए व्यक्तियों या समूहों को उकसाती है। अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता और हेट स्पीच का मुकाबला करने के लिए उनके बीच संतुलन बनाने के लिए सावधानीपूर्वक विधि का निर्माण और उनका समुचित कार्यान्वयन जरूरी है। इससे अभिव्यक्ति की आजादी को दबाए बिना हेट स्पीच की समस्या का समाधान किया जा सकता है।

हेट स्पीच से निपटने के लिए सुझाव-

- विधि आयोग ने विशेष रूप से हेट स्पीच को आपराधिक बनाने के लिए IPC में दो नई धाराएं जोड़ना प्रस्तावित किया था। ये धाराएं हैं- धारा 153C और धारा 505A.
  - ❖ इसी तरह के प्रस्ताव बेजबरुआ समिति और विश्वनाथन समिति ने भी प्रस्तुत किए थे।
  - ❖ इसके अलावा, वर्ष 2020 में आपराधिक कानूनों में सुधार पर गठित एक समिति ने भी हेट स्पीच से निपटने के लिए विशेष प्रावधानों की संभावनाओं की जांच की।
- हेट स्पीच पर प्रभावी ढंग से अंकुश लगाने के लिए यूट्यूब, ट्विटर और फेसबुक जैसी सोशल मीडिया एजेंसियों के लिए एक सख्त आचार संहिता लागू करना आवश्यक है।
- हेट स्पीच के मामलों से निपटने के लिए परानुभूति की भावना का विकास, विविधता को बढ़ावा देना और कानूनी ढांचे को मजबूत करना जरूरी है। इससे एक समावेशी और सहिष्णु समाज को बढ़ावा दिया जा सकेगा।

हेट स्पीच से संबंधित कानून

संवैधानिक प्रावधान

☛ संविधान का अनुच्छेद 19 (2) सभी नागरिकों को वाक् और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का अधिकार प्रदान करता है। हालांकि इस अधिकार पर अन्य बातों के साथ-साथ लोक व्यवस्था, सदाचार या नैतिकता के संरक्षण हेतु युक्तियुक्त प्रतिबंध लगाए गए हैं।

भारतीय दंड संहिता (IPC). 1860

☛ भारतीय दंड संहिता 1860 की विभिन्न धाराएं जैसे कि 153A, 153B, 298 आदि हेट स्पीच के विरुद्ध प्रावधान करती है। ये ऐसे भाषण या शब्दों से संबंधित है, जो उपद्रव उत्पन्न कर सकते हैं, धार्मिक मान्यताओं को अपमानित कर सकते हैं या राष्ट्रीय एकता के समक्ष संकट उत्पन्न कर सकते हैं।

लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951

☛ इस अधिनियम की धारा 8 ऐसे व्यक्ति को चुनाव लड़ने से अयोग्य घोषित करती है, जो वाक और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के अधिकार के दुरुपयोग का दोषी पाया गया हो।

☛ धारा 123 (3।) और धारा 125 निर्वाचन के संबंध में धर्म, मूल वंश, जाति, समुदाय या भाषा के आधार पर शत्रुता फैलाने वाली गतिविधियों को एक भ्रष्ट चुनावी आचरण मानती है। साथ ही, इन गतिविधियों को प्रतिबंधित मी करती है।

नागरिक अधिकार संरक्षण अधिनियम, 1955

☛ धारा 7 के तहत कहे गए या लिखे गए शब्दों के माध्यम से या संकेतों या तस्वीरों द्वारा या अन्यथा अस्पृश्यता को उकसाने और उसे बढ़ावा देने के विरुद्ध दंड का प्रावधान करती है।

हेट स्पीच के संदर्भ में महत्वपूर्ण न्यायिक निर्णय

☛ कर्नाटक राज्य और अन्य बनाम डॉ प्रवीण भाई तोगड़िया, 2004 वाद: सुप्रीम कोर्ट ने निर्णय दिया था कि राज्य या जिला प्राधिकरणों को किसी ऐसे व्यक्ति के राज्य या जिले में प्रवेश पर रोक लगाने का अधिकार है, जिसका कोई भाषण लोक व्यवस्था भंग कर सकता है।

☛ प्रवासी भलाई संगठन बनाम भारत संघ और अन्य, 2014 वाद: सुप्रीम कोर्ट ने भड़काऊ भाषण देने वाले राजनेताओं के संबंध में कुछ दिशा-निर्देश जारी किए थे।

आत्म- अभिशंसन/ आत्म-दोषारोपण के विरुद्ध अधिकार

(Right Against Self Incrimination)

☛ केरल उच्च न्यायालय ने कहा है कि भारतीय संविधान का अनुच्छेद 20 (3) किसी आरोपी को आपराधिक जांच के लिए रक्त का नमूना देने के लिए मजबूर करने से सुरक्षा नहीं प्रदान करता है।

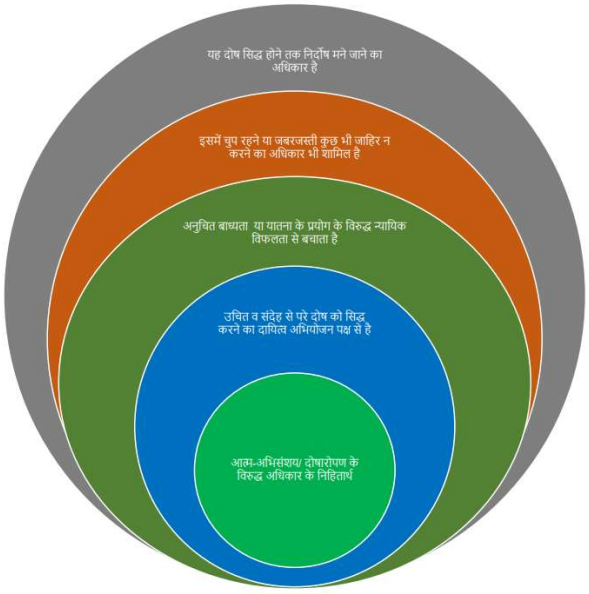

आत्म-अभिशंसन के विरुद्ध अधिकार क्या है?

- आत्म-अभिशंसन के विरुद्ध अधिकार अनुच्छेद 20 (3) के तहत एक मूल अधिकार है। इसके अनुसार, किसी भी अपराध के आरोपी व्यक्ति को खुद के खिलाफ गवाह बनने के लिए मजबूर नहीं किया जाएगा।
- यह ब्रिटिश दंड न्यायशास्त्र संहिता के मूल सिद्धांतों में से एक है, जिसका संयुक्त राज्य अमेरिका ने भी पालन किया और अपने संविधान में शामिल किया।

यह कब लागू नहीं होता है?

- **अपराध में शामिल वस्तुओं की प्राप्तिः** आपराधिक जांच से संबंधित दस्तावेज या हथियार जैसे कि भौतिक साक्ष्य की अनिवार्य प्राप्ति के लिए पूछताछ के मामले में आत्म-अभिशंसन के विरुद्ध अधिकार लागू नहीं होते।
- **भौतिक नमूना प्राप्त करनाः** यह अधिकार किसी व्यक्ति को अंगूठे का निशान देने, हस्ताक्षर का नमूना देने, रक्त का नमूना देने या शरीर में साक्ष्य की मौजूदगी को दिखाने से सुरक्षा प्रदान नहीं करता है।
- **आपराधिक कार्यवाही तक सीमितः** संविधान का अनुच्छेद 20(3) व्यक्तियों को नागरिक या प्रशासनिक कार्यवाही में आत्म-अभिसंशन (आत्म-दोषारोपण) से नहीं बचाता है।

''आत्म- अभिशंसन के विरुद्ध अधिकार'' की आलोचना

- यह जांच में सहयोग करने के कर्तव्य के विरुद्ध है।
- अभियुक्तों को चुप रहने की अनुमति देकर जांचकर्ता और अभियोजक का कार्य अनावश्यक रूप से कठिन बना दिया गया है।
- यह जांच के दौरान अनुचित आचरण के व्यवहार को नहीं रोकता है।
- यह बड़े सामाजिक उद्देश्यों की कीमत पर दोषियों को बचाता है।
- इसका दायरा खुद के खिलाफ गवाह बनने से सुरक्षा देने तक सीमित है लेकिन भौतिक साक्ष्यों की प्राप्ति को इसका संरक्षण प्राप्त नहीं है। इस तरह आरोपी को मजबूर कर भौतिक साक्ष्य प्राप्त किए जा सकते हैं।

निष्कर्ष

☛ अनुच्छेद 20 (3) में तहत निहित आत्म-अभिशंसन के विरुद्ध अधिकार प्रथम दृष्टया अपराध के आरोपी व्यक्ति के हितों को संरक्षित करता है, लेकिन एक बुनियादी सिद्धांत के रूप में यह निष्पक्ष सुनवाई सुनिश्चित करके राज्य के हितों को भी संरक्षित करता है । इस तरह इस प्रावधान के द्वारा समाज में कानून और व्यवस्था बनाए रखा जाता है।

❑❑❑

मौलिक अधिकार

अनुच्छेद 21(प्राण और दैहिक स्वतंत्रता का संरक्षण)-

➢ इसके तहत किसी व्यक्ति को उसके प्राण या दैहिक स्वतंत्रता से विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया के अनुसार ही वंचित किया जाएगा अन्यथा नहीं भारतीय संविधान में यह उपबंध ब्रिटेन से लिया गया है।

स्पष्ट है, इसका अर्थ यह है कि कार्यपालिका का कोई सदस्य किसी नागरिक की स्वतंत्रता में तभी हस्तक्षेप कर सकेगा जब वह अपनी कार्यवाही के समर्थन में विधि का कोई उपबंध दिखा सके अर्थात् जब राज्य या उसका कोई अभिकर्ता किसी व्यक्ति को उसकी दैहिक स्वतंत्रता से बचित करता है तो इस कार्यवाही को सही ठहराया जा सकता है जब उस कार्यवाही के समर्थन में कोई विधि हो और विधि द्वारा निर्धारित प्रक्रिया का कठोरता से पालन किया गया हो।

ब्रिटेन की भांति भारत के संविधान में भी दैहिक स्वतंत्रता अनु-32 और अनु-226 के तहत बंदी प्रत्यक्षीकरण (Habeas Corpus) द्वारा सुनिश्चित की गई। इस रिट के जरिए गिरफ्तार व्यक्ति स्वयं को न्यायालय के सामने उपस्थित करा सकता है और अपनी गिरफ्तारी के आधार की परीक्षा करा सकता है। ऐसे में न्यायालय द्वारा यह पाए जाने पर कि संबंधित व्यक्ति को गिरफ्तार किए जाने का विधिक औचित्य नहीं है तो वह स्वतंत्र कर दिया जाएगा। इसके साथ न्यायालय उस स्थिति में भी बंदी को मुक्त 3. कर देगा, जहाँ व्यक्ति को उसकी स्वतंत्रता से वंचित किए जाने की विधि तो है किंतु उस व्यक्ति की गिरफ्तारी के समय विधि द्वारा निर्धारित शर्तों का कठोरता से पालन नहीं किया गया।

वास्तव में किसी भी देश में व्यक्ति की स्वतंत्रता की प्रकृति आत्यांतिक नहीं हो सकती इसी कारण भारतीय संविधान ने दैहिक और व्यक्तिगत स्वतंत्रता को विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया के अधीन माना है। ऐसे में अनु 21 विधायिका की शक्तियों पर परिसीमन के रूप में नहीं है बल्कि यह व्यक्ति को कार्यपालिका के मनमाने या अवैध कार्य के विरूद्ध संरक्षण प्रदान करता है।

- उच्चतम न्यायालय ने अपने विभिन्न निर्णयों द्वारा अनु21 के अधिकार का दायरा और अधिक व्यापक कर दिया है। इसके अनुसार इस अधिकार में शोषण मुक्त और मानवीय गरिमा से पूर्ण जीवन जीने का अधिकार अंतनिर्मित है।
- स्पष्ट है न्यायालय के अनुसार जीवन के अधिकार का अर्थ है कि व्यक्ति को आश्रय एवं आजीविका का भी अधिकार हो क्योंकि इसके बिना कोई व्यक्ति जिंदा नहीं रह सकता 44वें संविधान संशोधन अधिनियम, 1978 द्वारा अनु 21 को भी 359 की परिधि से बाहर कर दिया गया है।
- उच्चतम न्यायालय ने अपने विभिन्न निर्णयों द्वारा प्राण व दैहिक स्वतंत्रता के अधिकार को विस्तृत किया और इसे निम्नलिखित बिंदुओ के तहत एक महत्वपूर्ण अधिकार बना दिया-
- जीवन जीने का अधिकार केवल शारीरिक अस्तित्व तक सीमित नहीं है, बल्कि इसमें मानवीय गरिमा के साथ जीवित रहने का अधिकार शामिल है। जीवित रहने का अधिकार केवल पशु की भांति जीवित रहने के अस्तित्व तक सीमित नहीं है।
- कार्मिकों को न्यूनतम मजदूरी का भुगतान न करना उन्हें मूलभूत मानवीय गरिमा के साथ जीवित रहने के अधिकार से वंचित करता है, जो अनु 21 का उल्लंघन है। जीवन के अधिकार आजीविका का अधिकार शामिल है। अन्यथा किसी व्यक्ति को जीवन के अधिकार से वंचित करने का सबसे आसान तरीका यह है कि उसे उसकी आजीविका के साधन से वंचित कर दिया जाए।
- सुभाष कुमार बनाम बिहार राज्य मामले में न्यायालय ने शुद्ध जल और वायु के अधिकार को मौलिक अधिकार माना है।
- मेनका गांधी बनाम भारत संघ मामले में प्राण और दैहिक स्वतंत्रता के अधिकार मामले में न्यायालय नेअनु-21 के तहत विदेश भ्रमण के अधिकार को मौलिक अधिकार माना है।
- न्यायालय के अनुसार किसी गंभीर रूप से भायल व्यक्ति को समय से चिकित्सा उपचार न देना उसके जीने के अधिकार का अतिक्रमण है।
- न्यायालय के निर्णय के अनुसार किसी व्यक्ति को अमानवीय दशाओं में रहने के लिए विवश करना एक क्रमिक प्रक्रिया द्वारा उसे जीवन के अधिकार से वंचित करने के बराबर है और इसे फांसी से भी अधिक क्रूर माना जा सकता है।
- उन्नीकृष्णन बनाम भारत संघ मामले में प्रारंभिक शिक्षा का अधिकार न्यायालय ने जीवन के अधिकार के अंतर्गत एक मौलिक अधिकार माना है।
- प्राण और दैहिक स्वतंत्र के अधिकार में आत्महत्या का अधिकार शामिल नहीं है। इसी कारण भारतीय दंड संहिता की धारा-309 के तहत आत्महत्या का प्रयास दंडनीय है।
- मोहिन्दर सिंह चावला बनाम भारत संघ मामले में न्यायालय ने स्वास्थ्य के अधिकार को जीवन के अधिकार का एक अंखड हिस्सा माना है और इसी आधार पर सरकारी कर्मचारी को स्वास्थ्य सुविधाएं प्रदान करना न्यायालय ने सरकार का संवैधानिक दायित्व माना है।
- अनु- 21 के तहत प्राण व दैहिक स्वतंत्रता का अधिकार जेल में बंद कैदियों को भी प्राप्त है।
- अनु. 21 के तहत एकांतता का अधिकार शामिल है। जिसके आधार पर किसी व्यक्ति का टेलीफोन टेप करना अनु 21 का उल्लंघन माना जाएगा।
- न्यायालय ने कर्ज अदा न कर पाने पर किसी गरीब व्यक्ति को कारावास में डाल देने को उसकी वैयक्तिक स्वतंत्रता से वंचित करने का मामला माना है।

☞ **स्वाधीनता (लिबर्टी) एवं स्वतंत्रता (फ्रीडम) : (Liberty and Freedom)**

- **स्वाधीनता :** किसी व्यक्ति को ''जीवन जीने के तरीके, व्यवहार या राजनीतिक विचारों पर बिना किसी दमनकारी प्रतिबंधों के समाज में स्वतंत्र रहने की स्थिति'' को स्वाधीनता कहते हैं।
- **स्वतंत्रता :** स्वतंत्रता एक ''ऐसी स्थिति है जिसमें किसी व्यक्ति के पास अपनी इच्छा अनुसार बोलने, कार्य करने और सोचने का अधिकार'' होता है।
- **नागरिक स्वाधीनता (मूल अधिकार) :-**
  1. समानता का अधिकार (अनुच्छेद 14-18)
  2. स्वतंत्रता का अधिकार (अनुच्छेद 19-22)
  3. शोषण के विरुद्ध अधिकार (अनुच्छेद 23-24)
  4. धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार (अनुच्छेद 25-28)
  5. संस्कृति और शिक्षा संबंधी अधिकार (अनुच्छेद 29-30)
  6. संवैधानिक उपचारों का अधिकार (अनुच्छेद 32)
- **नागरिक स्वाधीनता के उद्देश्य-**
  - समान अधिकार उपलब्ध कराना।
  - राजनीतिक लोकतंत्र की स्थापना करना।
  - विधि की सर्वोच्चता को बनाए रखना।
  - समाज के कमजोर वर्गों की रक्षा करना।
  - जिम्मेदारी की भावना पैदा करना।
- **नागरिक स्वाधीनता का महत्व-**
  - यह भौतिक और नैतिक संरक्षण को बढ़ावा देती हैं।
  - इसकी प्रकृति न्यायोचित होती हैं।
  - यह संविधान के मूल ढांचे का हिस्सा है।
  - यह राज्य के कार्यों और निजी व्यक्तियों की गतिविधियों पर यथोचित नियंत्रण सुनिश्चित करता है।
  - यह लोकतांत्रिक स्थिरता का संकेतक है।

➢ **नागरिक स्वाधीनता के प्रयोग से जुड़ी चुनौतियां**

- ये न तो अनन्य हैं और न ही संवैधानिक संशोधनों से मुक्त हैं।
- संबंधित कानूनों के क्रियान्वयन में व्याप्त कमियां।
- राज्य की कार्रवाईयों के परिणामस्वरूप नागरिक स्वतंत्रता का अतिक्रमण, उदाहरण के लिए- संविधान में नौंवी अनुसूची को शामिल करना।
- नागरिकों द्वारा यथोचित प्रतिबंधों का प्रयोग न कर पाना।

नोटः-

- सकारात्मक स्वाधीनता का निर्माण करना, उदाहरण के लिए- व्यक्तियों द्वारा आत्मबोध या आत्मनिर्णय को प्राप्त करने के लिए राज्य को आवश्यक परिस्थितियों का निर्माण करना चाहिए।
- सरकार को लोगों के कल्याण की रक्षा से संबंधित अपने दायित्व का पालन करना चाहिए।
- स्वतंत्रताओं और स्वाधीनता का अतिक्रमण करने वाले कानूनों को बनाने से बचना चाहिए।
- नागरिक स्वाधीनता के उल्लंघन को रोकने हेतु स्वतंत्र न्यायपालिका महत्वपूर्ण है।
- 'स्वाधीनता और स्वतंत्रता के संरक्षण' को एक मौलिक राजनीतिक मूल्य बनाने की दिशा में नागरिक समाज और मीडिया आदि की भूमिका को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।

मृत्युदंड (Death Penalty)

☛ एक निर्णय में, भारत के सुप्रीम कोर्ट ने मौत की सजा पाने वाले दोषियों का मनोवैज्ञानिक मूल्यांकन करने के महत्व को दोहराया है।

अन्य संबंधित तथ्य

☛ सुप्रीम कोर्ट ने अपने आदेश में कहा कि विशेषज्ञ चिकित्सकों द्वारा दोषी कैदियों का मनोवैज्ञानिक मूल्यांकन किया जाना चाहिए और दोषी कैदियों की सजा कम करवाने वाले जांच अधिकारियों (Mitigating Investigators) तक पहुंच होनी चाहिए।

☛ न्यायालय ने माना है कि यह कदम दोषी व्यक्ति की शारीरिक और मानसिक स्थिति तथा पृष्ठभूमि की एक स्वतंत्र एवं समग्र तस्वीर प्रस्तुत करने में मददगार साबित होगा।

मृत्युदंड से संबंधित संवैधानिक प्रावधान-

☛ **अनुच्छेद 21:** किसी भी व्यक्ति को कानून द्वारा स्थापित प्रक्रिया के अलावा उसके जीवन या व्यक्तिगत स्वतंत्रता से वंचित नहीं किया जाएगा।

☛ **अनुच्छेद 72** में राष्ट्रपति तथा अनुच्छेद 161 में राज्यपाल की क्षमादान शक्ति का उल्लेख है।

☛ **सातवी अनुसूची** के तहत आपराधिक कानून और आपराधिक प्रक्रिया समवर्ती सूची के विषय है। इसके चलते मृत्युदंड से संबंधित कई कानून मौजूद है। उदाहरण के लिए भारतीय दंड संहिता, 1880 सेना कानून, 1950, वायु सेना कानून, 1950 नौसेना कानून, 1956 अनुसूचित जाति / अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम 1989 आदि।

डेटा बैंक

मृत्य दंड

☛ 2015 की तुलना में 2022 में मृत्युदंड की सजा पाए कैदियों की संख्या में 40% से अधिक की वृद्धि हुई है।

☛ 2022 के अंत तक 113 देशों ने मृत्युदंड के प्राकशन को समाप्त कर दिया था।

मृत्युदंड से संबंधित अंतर्राष्ट्रीय अभिसमय

☛ निम्नलिखित के माध्यम से संयुक्त राष्ट्र और उसके समान कई एजेंसियां मृत्युदंड का विरोध करती है-

- नागरिक और राजनीतिक अधिकारों पर अंतर्राष्ट्रीय प्रसविदा (ICCPR) का दूसरा वैकल्पिक प्रोटोकॉल
- बाल अधिकारों पर अभिसमय (CRC)
- मृत्युदंड के उपयोग पर रोक के लिए 2007 से चार संयुक्त राष्ट्र महासभा संकल्प आदि।

मृत्युदंड के बारे में

☛ मृत्युदंड को 'कैपिटल पनिशमेंट' भी कहा जाता है। इसे श्कानून द्वारा

☛ स्वीकृत एक ऐसे कार्य के रूप में परिभाषित किया जा सकता है, जिसके तहत एक व्यक्ति को एक उचित कानूनी सुनवाई के बाद अपराध की सजा के रूप में मृत्युदंड दिया जाता है।

☛ अत्यंत प्राचीन काल से ही इसका उपयोग दंड के एक तरीके के रूप में किया जाता रहा है। लेकिन मृत्युदंड की नैतिक स्वीकार्यता अर्थात् राज्य द्वारा लोगों को मृत्युदंड देने की शक्ति और इसकी परिस्थितियां वैश्विक स्तर पर वाद-विवाद का विषय रही हैं।

मृत्युदंड के पक्ष में तर्क

☛ **निवारक (Deterrence) :** समाज की अधिक सार्थकता के लिए मृत्युदंड के समर्थकों द्वारा इसे यह तर्क देकर उचित ठहराया जाता है कि इससे समाज में गंभीर अपराध के लिए मृत्युदंड दिए जाने का भय उत्पन्न होता है। इस प्रकार यह महत्वपूर्ण निवारक के रूप में कार्य करता है।

☛ **प्रतिकारी (Retributive) न्यायः** मृत्युदंड प्रतिकार का एक उचित रूप है, क्योंकि इस सिद्धांत के अनुसार दोषी लोगों को उनके अपराध की गंभीरता के अनुपात में दंडित किया जाना चाहिए।

☛ **आनुपातिकता का सिद्धांतः** न्याय की मांग है कि सजा की मात्रा अपराध की गंभीरता के अनुपात में होनी चाहिए।

- **नागरिकों की इच्छा:** वर्ष 2012 में एक सर्वेक्षण में पाया गया कि लगभग 70% भारतीयों ने मृत्युदंड जारी रखने का समर्थन किया था।
- **पुलिस की मदद के लिए प्रोत्साहन:** मृत्युदंड का भय मौत की सजा पाने वाले कैदियों को अपनी सजा कम करवाने हेतु पुलिस की मदद करने के लिए प्रोत्साहित करता है (अर्थात्, दलील-सौदेबाजी द्वारा)।

मृत्युदंड से संबद्ध नैतिक मुद्दे-

- आजीवन कारावास जैसी अपेक्षाकृत कम कठोर सजा की तुलना में मृत्युदंड के सबसे बड़े निवारक या अधिक प्रभावी निवारक होने का कोई सांख्यिकीय प्रमाण नहीं है।
- एक सभ्य समाज में प्रतिकार का कोई संवैधानिक मूल्य नहीं है, क्योंकि मृत्युदंड, जीवन के बदले जीवन, आंख के बदले आंख जैसे प्रतिशोध को दर्शाता है।
- **मृत्युदंड की नैतिकता:** यह मानवीय गरिमा के विरुद्ध है और अहरणीय जीवन के अधिकार का उल्लंघन है, यहां तक कि उन लोगों के लिए भी जो कानून के दूसरे पक्ष की ओर हैं।
- मृत्युदंड का समर्थन इस बाधार पर करना कि इससे पुलिस को मदद मिलती है चिंताजनक है, क्योंकि इसी तरह के तर्कों का प्रयोग यातना, गोपनीयता के उल्लंघन और अन्य अनैतिक प्रथाओं को सही ठहराने के लिए किया जा सकता है।
- जब कानून और व्यवस्था को प्रतिकारात्मक न्याय के दृष्टिकोण से देखा जाता है, तो न्याय के सुधारात्मक और पुनर्वास संबंधी पहलुओं की उपेक्षा हो जाती है। उदाहरण के लिए, लोगों की शिक्षा एवं सामाजिक-आर्थिक स्थितियों में सुधार होने के साथ-साथ गंभीर अपराधों में भी कमी आती है।

मृत्युदंड से संबंधित अन्य मुद्दे

- **वस्तुनिष्ठता का अभाव :** गंभीरता बढ़ाने वाले और कम करने वाले कारकों पर कोई ठोस रूपरेखा नहीं होने के कारण।
- **प्रक्रियात्मक निष्पक्षता का अभाव :** रेयरेस्ट ऑफ रेयर मामलों की विवेकाधीन व्याख्या के कारण।
- **सत्यनिष्ठा का अभाव :** जैसा कि मीडिया का दबाव अक्सर समुदाय की सामूहिक चेतना को निर्देशित करता है।
- **प्रतिकूल आपराधिक न्याय प्रणाली :** संरचनात्मक और प्रणालीगत मुद्दों, जैसे संसाधनों की कमी, अप्रभावी अभियोजन आदि।
- **बहुत अधिक विलंब :** मृत्युदंड की सजा पाए कैदियों द्वारा मुकदमों, अपीलों और उसके बाद कार्यकारी क्षमादान में देरी का सामना करना।

मृत्युदंड की सजा के संदर्भ में महत्वपूर्ण न्यायिक निर्णय

- **बचन सिंह बनाम पंजाब राज्य 1880:** इस बाद में सुप्रीम कोर्ट ने मृत्युदंड देने के मामले में रेस्ट ऑफ का स्थापित किया था। साथ ही न्यायालय ने परिस्थितियों और गंभीरता को कम करने वाली परिस्थितियों के बीच तुलनात्मक विश्लेषण को अनिवार्य किया था।
- **माछी सिंह बनाम पंजाब राज्य 1983 :** अपराध को अंजाम देने के तरीके व उद्देश्य अपराध की समाज रोधी प्रकृति, अपराध की गंभीरता और अपराध का पीड़ित कौन है इसकी पहचान करना।
- **चौहान बनाम भारत संघ, 2014 :** मृत्यु को अमल में लाने में अनुचित अधिक और देरी वासना के बराबर है। यह को कम करने का एक आधार हो सकता है।
- **आगे की राह:** मृत्युदंड के नैतिक कार्यान्वयन में पालन किए जाने वाले सिद्धांत-
  - न्याय प्रदान करने में चूक या न्याय प्रणाली की विफलता से बचने के लिए कानूनों व खराब आपराधिक न्याय प्रणाली के मुद्दों को हल करना।
  - मृत्युदंड देने से पैदा होने वाले किसी गंभीर परिणाम से बचने के लिए न्याय के सुधारात्मक और पुनर्वास संबंधी पहलुओं पर उचित विचार के साथ सुसंगत न्यायिक दृष्टिकोण रखना।
  - अत्यधिक दंड दिए जाने से बचने और जीवन के मूल्य के प्रति अधिकतम सम्मान बनाए रखने के लिए मृत्युदंड दिए जाने हेतु मजबूत औचित्य प्रदान करना।
  - अभियुक्त को अनिश्चितता की यातना से बचाने हेतु यह सुनिश्चित करना कि दया याचिका न्याय प्रदान करने में चूक के विरुद्ध समयबद्ध निपटान के साथ अंतिम बचाव के रूप में कार्य करे।
- **दया याचिका (क्षमा याचना) (Mercy Plea (Clemency Petition)}**
  - न्यायालयों द्वारा दोषी ठहराए गए व्यक्ति के लिए, दया याचिका एक अंतिम संवैधानिक उपाय है। यह संविधान के अनुच्छेद 72 (राष्ट्रपति), और अनुच्छेद 161 (राज्यपाल) के तहत प्रदान किया गया है।

दया याचिका की आवश्यकता क्यों है?

- दया याचिका न्यायिक प्रक्रिया में एक मानवतावादी पक्ष जोड़ती है, क्योंकि दंड की समीक्षा विधिक दृष्टिकोण से परे भी की जा सकती है।
- यह न्यायपालिका द्वारा न्याय प्रदान करने में हुई चूक (Miscarriage of Justice) या संदिग्ध दोषसिद्धि (Doubtful conviction) के मामलों में निर्दोष व्यक्तियों को सजा से बचाने में मदद कर सकती है।
- यातना, झूठे साक्ष्यों, खराब विधिक सहायता आदि जैसे मुद्दों के कारण हमारी आपराधिक न्याय प्रणाली में मौजूद संकट के कारण न्याय प्रदान करने में चूक या संदिग्ध दोषसिद्धि की स्थिति उत्पन्न हो सकती है।

दया याचिका संबंधी मुद्दे

- दया याचिका पर कार्रवाई करने के लिए कोई निश्चित समय सीमा नहीं है। इस कारण इसके क्रियान्वयन में अत्यधिक देरी होती है। विधि आयोग ने कुछ ऐसे राष्ट्रपतियों का उल्लेख किया है, जिन्होंने दया याचिका के निपटान पर रोक लगा दी थी।
- दया याचिका की अस्वीकृति या स्वीकृति के कारणों को सार्वजनिक रूप से साझा करने की कोई बाध्यता नहीं है। इसलिए पारदर्शिता की कमी है। लेकिन, यह सीमित न्यायिक समीक्षा (एपुन सुधाकर और अन्य बनाम आंध्र प्रदेश सरकार बाद, 2006) के अधीन है।

मृत्युदंड की परिस्थितियों को कम करना

- सुप्रीम कोर्ट ने मृत्युदंड से संबंधित एक याचिका को संवैधानिक पीठ को सौंप दिया है। यह पीठ अभियुक्त को मृत्युदंड देते समय अपराध की गंभीरता को कम करने वाली संभावित परिस्थितियों की जांच करने हेतु दिशा-निर्देश तैयार करेगी।
- सुप्रीम कोर्ट ने सुझाव दिया कि कई ऐसी संभावित परिस्थितियां हो सकती हैं जिन पर विचार करने से इस निर्णय पर पहुंचा जा सकता है कि मृत्युदंड देना जरूरी है या नहीं। इन परिस्थितियों में सामाजिक परिवेश, आयु, शैक्षिक स्तर, पारिवारिक परिस्थितियां, क्या अपराधी ने जीवन में किसी प्रकार के सदमे का सामना किया है या नहीं आदि शामिल हैं।
  - इसका उद्देश्य मृत्युदंड की सजा वाले मामलों में आरोपी के अपराध की गंभीरता कम करने वाले कारकों को सामने रखने के लिए वास्तविक और सार्थक अवसर प्रदान करने के सवाल पर एक समान दृष्टिकोण अपनाना है।
- इससे पहले शीर्ष न्यायालय ने बचन सिंह मामले में रेयरेस्ट ऑफ रेयर का सिद्धांत प्रतिपादित किया था। इसके बाद माथी सिंह मामले में इस सिद्धांत के लिए नियम निर्धारित किए थे।
- इन नियमों में अपराध की गंभीरता को कम करने वाली संभावित परिस्थितियों का भी उल्लेख किया गया था।
- अपराध की गंभीरता को कम करने वाली संभावित परिस्थितियों में शामिल हैं, किसी आरोपी में सुधार और उसके पुनर्वास की संभावना, आरोपी का मानसिक स्वास्थ्य और उसके जीवन के अन्य पहलू।
  - ये ऐसे तथ्य हैं, जो किसी अपराध के लिए सजा को कम कर सकते हैं।
- किसी अपराध को गंभीर बनाने वाले कारकों में शामिल हैं:
  - अपराध करने का तरीका,
  - अपराध करने के पीछे मंशा,
  - अपराध की गंभीरता, और
  - अपराध का पीडित व्यक्ति।
  - ये परिस्थितियां सजा को बड़ा सकती हैं।

शिक्षा का अधिकार (अनुच्छेद-21क)

- उन्नीकृष्णन बाद में उच्चतम न्यायालय ने 14 वर्ष तक के बच्चों को प्रारंभिक शिक्षा का अधिकार जीवन की स्वतंत्रता के अंतर्गत एक मौलिक अधिकार माना है जिसे बाद में संविधान समीक्षा आयोग ने भी मौलिक अधिकारबनाए जाने की वकालत की। ऐसे में 86वें संविधान संशोधन अधिनियम, 2001 द्वारा संविधान में अनु- 21क जोड़कर 6-14 वर्ष के सभी बच्चों के लिए नि:शुल्क और अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा को मौलिक अधिकार बना दिया गया। इस अनु. के तहत यह प्रावधान है कि राज्य 6-14 वर्ष तक के सभी बच्चों को ऐसे ढंग से नि:शुल्क तथा अनिवार्य शिक्षा उपलब्ध कराएगा जैसा राज्य विधि द्वारा निर्धारित करें।

अनुच्छेद 22 (मनमानी गिरफ्तारी और निरोध से सरक्षण)

- अनु 22 (1) और अनु 22 (2) में मनमानी गिरतारी और निरोध के विरुद्ध निम्नलिखित प्रावधान किए गए हैं-
- किसी गिरफ्तार किए गए व्यक्ति को उसकी गिरफ्तारी का कारण शीघ्र बताया जाना आवश्यक होगा और बिना कारण बताए उसे गिरफ्तार नहीं किया जा सकेगा।
- किसी व्यक्ति को अपनी रूचि के वकील और अपने बचाव के लिए उससे परामर्श करने से नहीं रोका जाएगा।
- प्रत्येक व्यक्ति को जिसे गिरफ्तार किया गया है और उसे अभिरक्षा में निरूद्ध रखा गया है, यात्रा के समय जो गिरफ्तारी के स्थान से मजिस्ट्रेट के न्यायालय तक का जाने का समय को छोड़कर गिरफ्तार किए गए व्यक्ति को गिरफ्तारी से 24 घंटे के भीतर निकटतम मजिस्ट्रेट के सामने पेश किया जाएगा। ऐसे किसी व्यक्ति को मजिस्ट्रेट के प्राधिकार के बिना उपर्युक्त अवधि से अधिक समय तक अभिरक्षा (Custody) में निरूद्ध नहीं रखा जा सकेगा।

  किंतु ये रक्षा के उपाय शत्रु देश के नागरिक एवं निवारक निरोध कानून के अंतर्गत गिरफ्तार या निरूद्ध व्यक्ति के संदर्भ में लागू नहीं होगा।

दंडस्वरूप निरोध बनाम निवारक निरोध-

दंडस्वरूप निरोध का उद्देश्य

- किसी व्यक्ति को उसके द्वारा किए गए कार्य के लिए दंड देना। और यह तभीबहो सकता है जब उसके द्वारा किए गए व्यवहार पर न्यायालय द्वारा विचार कर लिया गया हो। वहीं दूसरी तरफ निवारक निरोध कानून का उद्देश्य उस व्यक्ति को उस में निरोध इस आशंका से होता है कि वह कुछ ऐसा दोषपूर्ण दंडनीय कार्य को करने से रोकना है। स्पष्ट है इस मामले कार्य करने वाला है जो संविधान में वर्णित प्रावधानों के अंतर्गत आता है। ऐसे में किसी राज्य की सुरक्षा, लोक व्यवस्था बनाए रखने, समुदाय के लिए आवश्यक सेवाओं को बनाए रखने, रक्षा, विदेश कार्य या भारत की सुरक्षा संबंधी कारणों से निवारक निरोध प्रक्रिया को अपनाया जाता है जिसके तहत सक्षम प्राधिकारी के पास आरोप

सिद्ध करने हेतु उपयुक्त साक्ष्य का अभाव होता है या कानूनी प्रक्रिया को अपनाते हुए उसे दोषसिद्ध नहीं ठहराया जा सकता है। अमेरिका और यू.के. में निवारक निरोध कानून का प्रयोग शांति के समय में नहीं किया जा सकता जबकि भारत में इस कानून का प्रयोग संदेह के आधार पर गिरफ्तारी में किया जा सकता है।

- उपर्युक्त विवेचना से स्पष्ट है कि निवारक निरोध के अंतर्गत गिरफ्तारी का तात्पर्य किसी व्यक्ति को दंडित करना नहीं है, बल्कि ऐसी आशंका है कि वह व्यक्ति कोई गैर कानूनी कार्य कर सकता है तथा देश की कानून व्यवस्था, शांति व सुरक्षा के लिए खतरा बन सकता है तो उसे अपराध से रोकने के लिए निवारक निरोध के अंतर्गत गिरफ्तार किया जा सकता है।
- अनुच्छेद 22 (4) के अनुसार निवारक निरोध के तहत् किसी व्यक्ति की गिरफ्तारी की अवधि तीन माह की होगी किंतु यदि उच्च न्यायालय के वर्तमान या पूर्व न्यायाधीश या न्यायाधीश बनने की योग्यता रखने वाले व्यक्तियों से बना सलाहकार बोर्ड अनुमति देता है तो गिरफ्तारी की अवधि तीन माह से अधिक हो सकती है। इसके साथ अनु. 22(7) के अंतर्गत संसद को सलाहकार कतम अवधि तथा विशेष परिस्थितियों और विशेष वर्गों बोर्ड द्वारा अपनाई जाने वाली प्रक्रिया गिरफ्तारी की अधि के लिए सलाहकार बोर्ड की राय के बिना तीन माह से अधिक अवधि के लिए गिरफ्तारी के लिए नियम बनाने का अधिकार प्राप्त है।

भारत में विभिन्न निवारक निरोध अधिनियम-

- भारतीय संसद ने 1950 में सर्वप्रथम निवारकनिरोध अधिनियम 1950 पारित किया था जो एक अस्थायी अभि था और प्रारंभ में सिर्फ एक वर्ष के लिए था। किंतु इस अधिनियम की अवधि अनेक बार बढ़ाई गयी। 1969 में अंतत: इसे समाप्त कर दिया गया।
- 1971 में आंतरिक सुरक्षा अधिनियम नाम से एक नया अधिनियम बनाया गया जो विध्वंसक गतिविधि यो के विरूद्ध था। (MISA Maintenance of Internal Security Act)
- अप्रैल 1978 ई. में संसद ने आंतरिक सुरक्षा अभि नियम को निरसित कर दिया।
- 1974 ई. में संसद ने विदेशी मुद्रा संरक्षण औरतस्करी निवारण अधिनियम 1974 पारित किया। 1974 के अधिनियम का उद्देश्य तस्करी, विदेशी मुद्रा की कालाबाजारी आदि असामाजिक कार्यों को रोकना था।
- 1980 में राष्ट्रीय सुरक्षा अधिनियम निर्मित किया गया।
- 1980 में ही चोर बाजारी निवारण और आवश्यक वस्तु प्रदाय अधिनियम बनाया गया (ESMA & Essential Services Maintenance Act)
- आतंकवादी गतिविधियों पर अंकुश लगाने के उद्देश्य से 1985 में आतंकवादी एवं विध्वंशकारी क्रियाकलाप निवारण अधिनियम (TADA Terrorist and Destructrive Act) बनाया गया जिसे 1995 में समाप्त कर दिया।
- 2002 में आतंकवाद निवारण अधिनियम बनाया गया (POTA&Prevention of Terrorist Activies) जिसे 2004 में समाप्त कर दिया गया।

निवारक निरोध अधिनियम बनाने की शक्ति-

- भारतीय संविधान ने निवारक निरोध कानून बनाने की विधायी शक्ति संघ और राज्य के मध्य विभाजित की है। संघ को संविधान की सातवीं अनुसूची की सूची के अंतर्गत प्रविष्टि-9 निवारक निरोध कानून निर्मित करने की शक्ति प्रदान करता है। इसका आधार रक्षा, विदेश कार्य और भारत की सुरक्षा होगी। इसके साथ सूची-तीन की प्रविष्टि-3 के तहत राज्य की सुरक्षा, लोक व्यवस्था बनाए रखने या समुदाय के लिए आवश्यक सेवाओं को बनाए रखने हेतु राज्य को निवारक निरोध का उपबंध करने की शक्ति प्राप्त है।

प्रिवेंटिव डिटेंशन (Preventive Detention)

सुर्खियों में क्यों?

☛ हाल ही में, सुप्रीम कोर्ट ने निर्णय देते हुए कहा है कि प्रिवेंटिव डिटेंशन (निवारक निरोध) का केवल असाधारण परिस्थितियों में ही उपयोग किया जाना चाहिए।

प्रिवेंटिव डिटेंशन (निवारक निरोध) के लिए आधार

- राज्य की सुरक्षा
- विदेश मामले या भारत की सुरक्षा
- लोक व्यवस्था बनाए रखने के लिए
- आपूर्ति और आवश्यक सेवाओं को बहाल रखने के लिए तथा रक्षा संबंधी मामलों में

अन्य संबंधित तथ्य

☛ सुप्रीम कोर्ट ने एक आदेश में कहा है कि प्रिवेंटिव डिटेंशन राज्य को प्राप्त एक असाधारण शक्ति है। यह व्यक्ति की व्यक्तिगत स्वतंत्रता को प्रभावित करती है। इस कारण इसका संयमित तरीके से ही प्रयोग किया जाना चाहिए।

- न्यायालय ने कानून और व्यवस्था की परिस्थितियों और लोक व्यवस्था के भंग होने के बीच अंतर किया है। प्रिवेंटिव डिटेंशन केवल लोक व्यवस्था के भंग होने की स्थिति में ही लागू किया जा सकता है न कि कानून और व्यवस्था से संबंधित परिस्थितियों में।

☛ इस निर्णय में शीर्ष न्यायालय की पीठ ने ''अशोक कुमार बनाम दिल्ली प्रशासन'' मामले में 1982 के सुप्रीम कोर्ट के निर्णय का हवाला दिया है। इस मामले में कहा गया था कि प्रिवेंटिव डिटेंशन का प्रावधान समाज को सुरक्षा प्रदान करने के लिए किया गया है।

- इस कानून का उद्देश्य किसी व्यक्ति को उसके द्वारा किए गए कृत्य के लिए दंडित करना नहीं है, बल्कि किसी कृत्य को करने से पहले निवारक हस्तक्षेप करने और ऐसा करने से उसे रोकना है।

भारत में प्रिवेंटिव डिटेंशन का प्रावधान करने वाले कानून

- **प्रिवेंटिव डिटेंशन अधिनियम (1950):** यह इस तरह का पहला कानून था। इसे राष्ट्र-विरोधी तत्वों को राष्ट्र की सुरक्षा और रक्षा के प्रति शत्रुतापूर्ण कार्य करने से रोकने हेतु पारित किया गया था।
- **आंतरिक सुरक्षा व्यवस्था अधिनियम (MISA)[13], 1971:** यह आपातकाल के दौरान इसके तहत किए गए अत्याचारों के लिए कुख्यात है। आपातकाल की अवधि में इसे राजनीतिक विरोधियों, ट्रेड यूनियंस और सरकार को चुनौती देने वाले नागरिक समाज समूहों के खिलाफ आक्रामक रूप से इस्तेमाल किया गया था।
  - 1978 के 44वें संविधान संशोधन अधिनियम द्वारा MISA को समाप्त कर दिया गया था।
- **विदेशी मुद्रा का संरक्षण और तस्करी रोकथाम अधिनियम (COFEPOSA)[14], 1974:** इसमें विदेशी मुद्रा को बनाए रखने व उसमें वृद्धि करने तथा इसके अवैध व्यापार को रोकने के लिए प्रिवेंटिव डिटेंशन का प्रावधान किया गया है।
- **आतंकवादी और विघटनकारी गतिविधियां (रोकथाम) अधिनियम {TADAJ}[15], 1985 :** इसे प्रिवेंटिव डिटेंशन की प्रणाली के तहत तैयार किया गया सबसे शक्तिशाली और प्रतिबंधात्मक कानून माना जाता है।
- **आतंकवादी गतिविधि रोकथाम कानून (POTA)[16], 2002:** इसे TADA के समान उद्देश्यों के लिए लागू किया गया था।

प्रिवेंटिव डिटेंशन के बारे में

- **प्रिवेंटिव डिटेंशन का अर्थ है**- अपराध करने से पहले ही किसी ऐसे व्यक्ति को हिरासत में लेना जो कानून और व्यवस्था के समक्ष खतरा उत्पन्न कर सकता है। ऐसा व्यक्ति अभी तक कोई अपराध नहीं किया होता है, लेकिन प्राधिकारियों को लगता है कि वह ऐसा कर सकता है। ऐसे में व्यक्ति द्वारा भविष्य में किसी अपराध को अंजाम देने से रोकने हेतु उसे डिटेन (गिरफ्तार) किया जाता है।
  - इसके तहत, व्यक्ति को बिना कोई मुकदमा चलाए हिरासत में रखा जाता है।
- भारत का संविधान अनुच्छेद 22 (1) और 22(2) के तहत गिरफ्तारी तथा हिरासत से सुरक्षा प्रदान करता है।
  - यह सुरक्षा प्रिवेंटिव डिटेंशन कानूनों के तहत गिरफ्तार या हिरासत में लिए गए व्यक्ति के लिए उपलब्ध नहीं है [अनुच्छेद 22(3)]।
- **निम्नलिखित कुछ कानून हैं, जिनमें प्रिवेंटिव डिटेंशन के प्रावधान किए गए हैं:**
  - दंड प्रक्रिया संहिता;
  - नारकोटिक ड्रग्स एंड साइकोट्रोपिक सब्सटेंस एक्ट, 1985;
  - गैर-कानूनी गतिविधियां (रोकथाम) अधिनियम आदि।
- राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो (NCRB) की भारत में अपराध रिपोर्ट 2021 के अनुसार, भारत में 2021 में 1.1 लाख से अधिक लोगों को प्रिवेंटिव डिटेंशन के तहत हिरासत में रखा गया था। यह संख्या 2017 के बाद सबसे अधिक है।
- दंड प्रक्रिया संहिता (CrPC) भी धारा 151 के अंतर्गत प्रिवेंटिव डिटेंशन के तहत गिरफ्तारी का प्रावधान करती है।
  - CrPC की धारा 151 के अनुसार, यदि पुलिस को लगता है कि ''किसी संज्ञेय अपराध[17]'' को रोकने के लिए प्रिवेंटिव डिटेंशन के तहत गिरफ्तारी करना आवश्यक है, तो उसे ऐसा करने का अधिकार है।

प्रिवेंटिव डिटेंशन से जुड़े मुद्दे-

- **कार्यकारी निरंकुशता (Executive Tyranny) :** प्रिवेंटिव डिटेंशन कानूनों को अत्यधिक प्रशासनिक नियंत्रण में लागू करने और न्यायिक हस्तक्षेप के दायरे को सीमित करने के लिए डिजाइन किया जाता है।
- **मूल अधिकारों का उल्लंघन:** प्रिवेंटिव डिटेंशन के तहत, डिटेन किए गए व्यक्ति के अनुच्छेद 14, अनुच्छेद 19 और अनुच्छेद 21 के अंतर्गत प्राप्त मूल अधिकारों का किसी गिरफ्तार किए गए व्यक्ति के मौलिक अधिकारों की तुलना में कहीं अधिक उल्लंघन होता है।
- **दुरुपयोग:** उदाहरण के लिए 2018 से 2020 तक राष्ट्रीय सुरक्षा अधिनियम (NSA) 18 के तहत सभी डिटेंशन ऑर्डर्स में से 78.33% गलत पाए गए हैं।
- **कार्यभार:** लंबित मामले अदालतों के कार्यभार में वृद्धि कर रहे हैं। इसलिए, डिटेंशन संबंधी आदेशों के खिलाफ रिट याचिकाओं की सुनवाई में कई महीने लग सकते हैं। नतीजतन, यह प्रक्रिया उत्पीड़क बन जाती है।
- **सलाहकार बोर्ड:** संविधान द्वारा अनुच्छेद 22 के तहत सलाहकार बोर्ड के सदस्यों के लिए निर्धारित पात्रता मानदंड राज्य को इसे विशुद्ध रूप से कार्यकारी समिति बनाने की शक्ति प्रदान करते हैं।
  - ऐसी समिति को निष्पक्ष या राजनीतिक प्रभाव से मुक्त नहीं माना जा सकता है।
- **डिटेन किए गए व्यक्ति का उत्पीड़न:** प्रिवेंटिव डिटेंशन के तहत हिरासत संबंधी मामलों के निपटान हेतु कानूनी प्रक्रिया लंबी हो जाती है। साथ ही, रिट याचिका दायर करने के अलावा अन्य निवारण तंत्रों की अनुपलब्धता के कारण डिटेन किए गए व्यक्ति का उत्पीड़न भी होता है।

आगे की राह

- **कानूनी प्रतिनिधि (Legal Representative) :** डिटेन किए गए व्यक्ति को मामले के किसी भी स्तर पर अपनी पसंद के वकील से परामर्श करने और वकील द्वारा प्रतिनिधित्व किए जाने का अधिकार प्रदान किया जाना चाहिए। इससे यह सुनिश्चित हो सकेगा कि बचाव पक्ष द्वारा सलाहकार बोर्ड के समक्ष अपना मत प्रभावी रूप से रखा गया है। इससे तथ्यों के आधार पर निर्णय लेने में सहायता प्राप्त होगी।
- **सलाहकार बोर्ड:** इसमें उच्च न्यायालयों के केवल मौजूदा न्यायाधीशों को शामिल किया जाना चाहिए, ताकि प्रिवेंटिव डिटेंशन की वैधता और विस्तार का निर्णय करते समय त्वरित सुनवाई तथा प्रभावी एवं निष्पक्ष निर्णयन सुनिश्चित किया जा सके।
- **समय-सीमा :** सलाहकार बोर्ड द्वारा निर्धारित समय-सीमा के भीतर अनुमोदन के बाद ही प्रिवेंटिव डिटेंशन आदेश को प्रभावी बनाया जाना चाहिए। इससे डिटेन किए गए व्यक्ति को केवल कार्यकारी आदेश के आधार पर अत्यधिक लंबे समय तक हिरासत में नहीं रखा जा सकेगा।
- **स्वतंत्र निकाय:** पारदर्शिता बढ़ाने और दुरुपयोग को रोकने के लिए प्रिवेंटिव डिटेंशन एवं प्राधिकार के दुरुपयोग के आरोपों आदि की जांच के लिए एक आयोग का गठन किया जाना चाहिए।
- **संवैधानिक सुरक्षा उपाय:** प्रिवेंटिव डिटेंशन का उपयोग करते समय अनुच्छेद 21 (विधि की सम्यक् प्रक्रिया) तथा अनुच्छेद 22 (मनमाने ढंग से गिरफ्तारी और प्रिवेंटिव डिटेंशन से संरक्षण) के प्रावधानों के साथ-साथ संबंधित कानून का भी पालन करना चाहिए।

प्रिवेंटिव डिटेंशन के संदर्भ में महत्वपूर्ण न्यायिक निर्णय

- **ए. के. गोपालन बनाम मद्रास राज्य (1950):** न्यायालय ने अनुच्छेद 22 (5) के स्पष्ट प्रावधानों के कारण प्रिवेंटिव डिटेंशन अधिनियम को स्वीकृति दी थी।
- **शिब्बन लाल बनाम उत्तर प्रदेश राज्य वाद:** सुप्रीम कोर्ट ने कहा था कि अदालत डिटेन करने की वास्तविकता या डिटेन करने के लिए कोर्ट में पेश तथ्यों की जांच करने में सक्षम नहीं है।
- **शंभू नाथ शंकर बनाम पश्चिम बंगाल राज्य वाद:** हालांकि, प्रिवेंटिव डिटेंशन की अवधारणा अपने आप में कठोर है और संविधान में गारंटीकृत मौलिक अधिकारों का उल्लंघन करती है, लेकिन कभी-कभी देश की सुरक्षा को बनाए रखने के लिए राज्य द्वारा इस तरह के अत्यधिक कठोर कदम उठाने आवश्यक होते हैं।

- **अनुच्छेद 23-(शोषण के विरूद्ध अधिकार जिसके तहत मानव के दुर्व्यापार और श्रम का प्रतिषेध)**

➢ वास्तव में भारतीय संविधान समाज के दुर्बल वर्गों का शोषण राज्य द्वारा या दुराचारी व्यक्तियों द्वारा रोकने के लिए अनु 23 और अनु-24 के तहत शोषण के विरूद्ध अधिकार प्रदान करता है।

➢ अनु 23 (1) के अनुसार मानव का दुर्व्यापार और बेगार तथा इसी प्रकार के अन्य बलात् श्रम का प्रतिषेध किया गया है और इस उपबंध का कोई भी उल्लंघन अपराध होगा जो विधि के अनुसार दंडनीय होगा।

➢ अनु. 23 (2) के अंतर्गत राज्य को सार्वजनिक प्रयोजनों के लिए अनिवार्य सेवा करवाने से उपर्युक्त उपबंध नहीं रोकेगा। किंतु ऐसी सेवा आरोपित करने में राज्य केवल धर्म, मूलवंश, जाति या वर्ग या इनमें से किसी एक के आधार पर कोई विभेद नहीं करेगा।

➢ उपर्युक्त उपबंध में संविधान ने दासता शब्द की जगह मानव का दुर्व्यापार शब्द का प्रयोग किया है जिसके तहत दासता का प्रतिषेध होने के साथ महिलाओं, बालकों या विक्लांग व्यक्तियों के अनैतिक या अन्य प्रयोजनों के लिए दुर्व्यापार का भी प्रतिषेध है। स्पष्ट है कि इस अनुच्छेद द्वारा किसी व्यक्ति को नि:शुल्क सेवा करने के लिए विवश करने का प्रतिषेध किया गया है। इसी प्रकार के कार्यों को दंडित करने के लिए संसद ने अनैतिक व्यापार निवारण अधिनियम, 1976 बनाया है।

- **अनुच्छेद 24 कारखानों आदि में बालकों के नियोजन का प्रतिषेध**

➢ अनुच्छेद 24 के तहत 14 वर्ष से कम आयु के किसी बालक को किसी कारखाने या खान में काम करने के लिए नियोजित नहीं किया जाएगा या किसी अन्य खतरनाक नियोजन में नहीं लगाया जाएगा। इस अनु द्वारा लगाए गए प्रतिषेध की प्रकृति आत्यांतिक है।

➢ उच्चतम न्यायालय ने यह निर्देशित किया है कि कारखानों में बच्चों को खतरनाक कामों में नहीं लगाया जाना चाहिए तथा ऐसे बच्चों के कल्याण और उनके जीवन में गुणात्मक सुधार के लिए निश्चित कदम उठाए जाने चाहिए। न्यायालय का यह निर्णय 1991 में M.C. Mehta बनाम तमिलनाडु राज्य मामले में आया था। इसी मामले के 1996 के एक अन्य निर्णय के तहत न्यायालय ने यह निर्णय दिया कि 14 वर्ष से कम आयु के बच्चों के नियोजकों को 'बाल श्रम प्रतिषेध विनियमन अधि नियम' के उन उपबंधों का पालन अवश्य करना चाहिए जो प्रतिकर (मुआवजा) के लिए उनके माता पिता के नियोजन और बच्चों की शिक्षा के लिए उपबंध करते हैं।

☞ **इस अनुच्छेद के तहत निर्मित विभिन्न अधिनियम-**

1. बालक नियोजन अधिनियम-1938
2. कारखाना अधिनियम 1948
3. खान अधिनियम 1953
4. बाल श्रम (प्रतिषेध एवं नियमन) अधिनियम 1986-
5. बालक अधिकार संरक्षण आयोग अधिनियम 2005

➢ यह अधिनियम बालकों के अधिकारों के संरक्षण हेतु एक राष्ट्रीय एवं राज्य आयोग की स्थापना तथा बालकों के विरूद्ध अपराधों या बालक अधिकारों के उल्लंघन पर शीघ्र विचार करने हेतु प्रावधान करता है। वर्ष 2006 में सरकार ने बच्चों को घरेलू नौकरों के रूप में काम करने पर या होटल, दुकानों, कारखानों, रेस्तराओं आदि में नियोजन पर रोक लगा दी है।

➢ वास्तव में अनु. 23 और 24 के तहत प्रदान किए गए अधिकार व्यक्ति को दैहिक श्रम शोषण के विरूद्ध रक्षा प्रदान करते हैं तथा सामाजिक लोकतंत्र को सुनिश्चित करते हैं।

☞ **अनुच्छेद (25-28)धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार**

➢ अनु (25-28) के तहत भारतीय संविधान की प्रस्तावना बनाया गया है अर्थात् राज्य का कोई धर्म नहीं होगा। राज्य या उद्देशिका में प्रयोग की गई पंथनिरपेक्षता को आधार सभी धर्मों को समान आदर तथा संरक्षण प्रदान करेगा। धर्म के आधार पर किसी व्यक्ति के साथ कोई विभेद नहीं किया जाएगा तथा प्रत्येक व्यक्ति को अपने धर्म के पालन तथा प्रचार-प्रसार की स्वतंत्रता होगी।

➢ अनु० 25 (1) 'अंत: करण और धर्म के आचरण तथा प्रचार की स्वतंत्रता का अधिकार' प्रदान करता है अर्थात् इस अनुच्छेद के अनुसार सभी व्यक्तियों को अत: करण की स्वतंत्रता, अपने धर्म को बिना किसी बाधा के मानने, उसका आचरण करने व प्रचार करने की स्वतंत्रता होगी। किंतु इस स्वतंत्रता के अधिकार को लोक व्यवस्था, सदाचार और स्वास्थ्य के आधार पर प्रतिबंधित किया जा सकता है।

➢ अनु 25 (2) राज्य को धार्मिक स्वतंत्रता से संबंधित किसी आर्थिक, वित्तीय राजनैतिक तथा अन्य लौकिक क्रिया कलापों को विनियमित करने का अधिकार प्रदान करता है। इसी अनु के तहत राज्य सामाजिक कल्याण या सामाजिक सुधार के लिए हिंदुओं के मंदिरों को हिंदुओं के सभी वर्गों के लिए खोलने का प्रावधान कर सकती है।

☞ **अनुच्छेद 25 का स्पष्टीकरण-**

➢ कृपाण धारण करना और उसे लेकर चलना सिक्ख अनुच्छेद 28- शिक्षण संस्थाओं में धार्मिक शिक्षा या धार्मिक उपासना में शामिल होने की स्वतंत्रता धर्म का अंग समझा जाएगा।

➢ हिंदुओ का अर्थ हिंदु सिक्ख, बौद्ध और जैन धर्म के इस अनु के अतंर्गत राज्य निधि से पूर्णत: पोषित किसी मानने वालों के रूप में होगा।

उच्चतम न्यायालय ने यह स्पष्ट किया है कि धार्मिक स्वतंत्रता के अंतर्गत धर्म के प्रचार के अधिकार में बलात् धर्मांतरण का अधिकार शामिल: नहीं है।

➢ अनुच्छेद 26- धार्मिक कार्यों के प्रबंधन की स्वतंत्रता इस अनुच्छेद के तहत प्रत्येक धार्मिक संप्रदाय या उसके किसी भाग को-

(क) धार्मिक प्रयोजनों के लिए संस्थाओं की स्थापना करने और उन्हें चलाने का अधिकार,

(ख) धर्म संबंधी कार्यों का प्रबंधन करने का अधिकार,

(ग) चल और अचल संपत्ति के अर्जन और स्वामित्व का अधिकार,

(घ) अर्जित संपत्ति का विधि के अनुसार प्रशासन करने का अधिकार है।

किंतु यह अधिकार लोक व्यवस्था, सदाचार और स्वास्थ्य के अधीन ही प्राप्त है। हालांकि, न्यायालय के निर्णय के अनुसार संपत्ति के प्रशासन के अधिकार को विधि द्वारा विनियमित किया जा सकता है।

☞ **अनुच्छेद 27 किसी विशिष्ट धर्म की अभिवृद्धि के लिए कर न देने की स्वतंत्रता ।**

➢ इस अनुच्छेद के अंतर्गत किसी भी व्यक्ति को किसी विशिष्ट धर्म की अभिवृद्धि या पोषण के लिए व्यय हेतु कोई कर अदा करने के लिए बाध्य नहीं किया जाएगा। किंतु यदि करों का इस्तेमाल सभी धर्मों की अभिवृद्धि के लिए किया जाता है या किसी विशेष प्रयोजन के लिए शुल्क लगाया जाता है तो यह विधिमान्य होगा अर्थात् विधि के अनुसार होगा।

➢ स्पष्ट है यह अनुच्छेद 27 पंथनिरपेक्षता और सर्वधर्मसम्भाव की अभिव्यक्ति है।

☞ **अनुच्छेद 28 शिक्षण, संस्थाओं में धार्मिक शिक्षा या धार्मिक उपासना में शामिल होने की स्वतंत्रता**

➢ इस अनुच्छेद के अंतर्गत राज्य निधि से पूर्णत: पोषित किसी शिक्षण संस्था में कोई धार्मिक शिक्षा नहीं दी जाएगी। किंतु ऐसी शिक्षण संस्था जो किसी न्यास (Trust) के अधीन स्थापित हुई है और जिसके अनुसार वहां धार्मिक शिक्षा देना आवश्यक है, वहाँ यह प्रावधान लागू नहीं होगा।

➢ वहीं अनु. 28 (3) के अनुसार राज्य से मान्यता प्राप्त या राज्य निधि से सहायता प्राप्त किसी शिक्षण संस्था में उपस्थित होने वाले किसी व्यक्ति को धार्मिक शिक्षा में भाग लेने या धार्मिक उपासना में उपस्थित होने के लिए तब तक बाध्य नहीं किया जाएगा जब तक कि उस व्यक्ति ने या संबंधित व्यक्ति के आवश्यक होने पर उसके संरक्षक ने इसके लिए अपनी सहमति न दे दी हो।

अनुच्छेद 29-30 संस्कृति और शिक्षा संबंधी अधिकार।

- इस अनुच्छेद के अंतर्गत भारत के नागरिकों को भारत के राज्यक्षेत्र के अंदर अपनी विशेष भाषा, लिपि या संस्कृति को बनाए रखने का अधिकार प्राप्त है। हालांकि, अनुच्छेद 29 के शीर्षक में अल्पसंख्यक वर्गों के हितों का संरक्षण की व्याख्या है किंतु यह अधिकार उच्चतम न्यायालय के निर्णय के अनुसार अल्पसंख्यक व बहुसंख्यक सभी नागरिकों को प्राप्त है।

  अनुच्छेद 29 (2) में यह स्पष्ट किया गया है कि राज्य द्वारा पोषित या राज्य निधि से सहायता पाने वाली किसी शिक्षण संस्था में प्रवेश से किसी भी नागरिक को केवल धर्म, मूलवंश, जाति, भाषा या इनमें से किसी के आधार पर वंचित नहीं किया जाएगा।

☞ **अनुच्छेद 30- शिक्षा संस्थानों की स्थापना और प्रशासन का अल्पसंख्यक वर्गों के अधिकार।**

- अनु 30 (1) के अंतर्गत धर्म और भाषा पर आधारित सभी अल्पसंख्यक वर्गों को अपनी रूचि की शिक्षा संस्थाओं की स्थापना और उनके प्रशासन का अधिकार है। 44वें संविधान संशोधन अधिनियम, 1978 द्वारा यह व्यवस्था की गई है कि यदि अनु 30 (1क) के अनुसार अल्पसंख्यकों की शिक्षा संस्थाओं की संपत्ति का अनिवार्य अधिग्रहण या अर्जन किया जाता है तो उन्हें उचित और पर्याप्त मुआवजा दिया जाएगा।
- स्पष्ट है कि यहाँ प्रयुक्त 'अल्पसंख्यक' का तात्पर्य केवल 'धर्म और भाषा पर आधारित अल्पसंख्यकों' से है। इसमें अल्पसंख्यकों को शिक्षा का माध्यम तथा पढ़ाए जाने वाले विषयों को चुनने का अधिकार है और इसमें राज्य अनावश्यक हस्तेक्षप नहीं कर सकता। किंतु उच्चतम न्यायालय ने अपने एक निर्णय से स्पष्ट किया है कि शिक्षा संस्थाओं के प्रबंधन में कुप्रबंधन का अधिकार शामिल नहीं है। ऐसे में अगर इस प्रकार के शिक्षण संस्थानों में कुप्रशासन मिलता है या नैसर्गिक न्याय जैसी अवधारणा का उल्लंघन होता है तो राज्य के हस्तक्षेप को युक्तियुक्त माना जाएगा।
- अनु- 30 (2) के अनुसार राज्य शिक्षा संस्थाओं को अनुदान देने में इस आधार पर विभेद नहीं करेगा कि वह संस्थान धर्म या भाषा पर आधारित किसी अल्पसंख्यक वर्ग के प्रबंध में हैं।

अनुच्छेद 32 संवैधानिक उपचारों का अधिकार।

- वास्तव में मौलिक अधिकारों को संविधान में शामिल करने का कोई अर्थ नहीं होता, यदि इन्हें प्रभावी ढंग से लागू करने की प्रक्रिया की विवेचना संविधान में न दी गई होती। इसी संदर्भ में अनु- 32 के तहत मौलिक अधिकारों को प्रवर्तित कराने का अधिकार स्वयं एक मौलिक अधिकार है। संविधान द्वारा मौलिक अधिकार कार्यपालिका के साथ-साथ विधायिका के विरूद्ध भी प्रदान किए गए हैं। ऐसे में यदि कोई कानून या कोई कार्य किसी मौलिक अधिकार का उल्लंघन करता है तो प्रभावित व्यक्ति अनु 32 के तहत सीधा उच्चतम न्यायालय जा सकता है। संविधान का यही अनुच्छेद उच्चतम न्यायालय को मौलिक अधिकारों के रूप में संविधान का रक्षक बना देता है। चूंकि संविधान के अनु 32 में मौलिक अधिकारों को क्रियान्वित: करने का आश्वासन दिया गया है। अत: इस अनुच्छेद को संपूर्ण संविधान की आधार शिला कहा गया है। डॉ. अम्बेडकर ने अनु 32 को संविधान की आत्मा कहा था।

  अनु. 32 (2) के तहत न्यायालय को यह शक्ति प्राप्त है कि वह भाग-3 में वर्णित मूल अधिकारों को प्रवर्तित कराने के लिए आवश्यक रिट (writ) या आदेश जारी करें।

- **न्यायालय के द्वारा जारी किए जाने वाले विभिन्न रिट निम्नलिखित हैं-**
  1. बंदी प्रत्यक्षीकरण (Habeas Corpus),
  2. परमादेश (Mandamu),
  3. अधिकार पृच्छा (QuoWaranto),
  4. प्रतिषेध (Prohibition) और
  5. उत्प्रेषण (Certiorari)
- **बंदी प्रत्यक्षीकरण:** इसका शब्दिक अर्थ है सशरीर उपस्थित करना। इसके द्वारा न्यायालय बंदी बनाए गए किसी व्यक्ति को प्रस्तुत करने का आदेश दे सकता है ताकि बंदी बनाए जाने के कारणों का परीक्षण किया जा सके। अगर किसी व्यक्ति या व्यक्ति के समूह को अवैध रूप से बंदी बनाया जाता पाया गया तो न्यायालय उसे मुक्त करने का आदेश दे सकता है। स्पष्ट है इस रिट के द्वारा न्यायालय नागरिकों की व्यक्तिगत स्वतंत्रता की रक्षा करता है। यह रिट न्यायालय, राज्य एवं उसके प्राधिकारियों के साथ किसी व्यक्ति के विरूद्ध भी जारी कर सकता है। स्पष्ट है बगैर युक्तियुक्त कारणों के न तो राज्यों द्वारा और न ही किसी व्यक्ति द्वारा किसी को स्वतंत्र रहने के अधिकार से वंचित किया जा सकता है।
- **परमादेश:** यह एक उच्च आदेश है जिसके माध्यम से सरकारी प्राधिकारियों को अपने कर्तव्यों का पालन करने हेतु बाध्य किया जाता है। वास्तव में यह आदेश किसी सार्वजनिक पद पर कार्य करने वाले व्यक्तियों के साथ सरकार एवं अधीनस्थ न्यायालय एवं न्यायिक संस्थाओं के विरूद्ध भी जारी किया जा सकता है। किंतु इसे किसी निजी व्यक्ति के विरूद्ध जारी नहीं किया जा सकता। स्पष्ट है परमादेश तब जारी किया जा सकता है, जब न्यायालय को यह आभास होता है कि कोई सार्वजनिक पद पर बैठा व्यक्ति अपने संवैधानिक तथा कानूनी कर्तव्य का पालन नहीं कर रहा है और इस कारण किसी व्यक्ति के मौलिक अधिकारों का हनन हो रहा है।

- **अधिकार पृच्छा:** इसका शब्दिक अर्थ है 'किस अधिकार से'। इस रिट के द्वारा सरकारी पद पर बैठे या उससे जुड़े हुए प्राधिकारियों की शक्तियों का परीक्षण किया जाता है। न्यायलय इसके द्वारा सार्वजनिक पद पर कार्य कर रहे किसी लोक सेवक से यह पूछ सकता है कि वह किस अधिकार से कार्य कर रहा है। उसके दावे का औचित्य सिद्ध न होने पर उसे उसपद पर कार्य करने से रोका जा सकता है, किंतु यहाँ एक शर्त यह है कि यह पद सार्वजनिक सेवा से संबद्ध हो।
- **प्रतिषेध:** यह एक न्यायिक रिट है जिसे उच्चतमया उच्च न्यायालय द्वारा अपने अधीनस्थ न्यायालयों को जारी की जाती है। यदि कोई अधीनस्थ न्यायालय अपनी अधिकारिता के बाहर कार्य कर रहा है या देश के किसी विधि का उल्लंघन कर रहा है तो प्रतिषेध की रिट जारी किया जा सकता है। स्पष्ट है यह रिट ऐसे किसी सार्वजनिक अधिकारी के विरूद्ध जारी नहीं किया जा सकता जिस पर किसी न्यायिक कार्य का उत्तरदायित्व नहीं है।
- **उत्प्रेषण:** यह भी एक न्यायिक रिट है जिसे न्यायिक या अर्द्धन्यायिक न्यायाधिकरणों के विरूद्ध जारी किया जा सकता है। अगर कोई अधीनस्थ न्यायालय अपनी अधिकारिता के बाहर या देश की विधि के उलंघन में कोई निर्णय देता है तो यह रिट जारी की जाती है।

  स्पष्ट है, प्रतिषेध की रिट उस समय जारी की जाती है जब किसी मामले पर कार्यवाही चल रही हो. परंतु उस पर कोई आदेश नहीं दिया हो। वहीं उत्प्रेषण रिट तब जारी किया जाता है जब मामले पर आदेश दिया चुका हो।

☞ **उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालय के मध्य रिट निकालने की अधिकारिता में अंतर :**

- अनु. 32 के तहत उच्चतम न्यायालय सिर्फ मौलिक अधिकारों के प्रवर्तन हेतु रिट जारी कर सकता है जबकि अनु. 226 के तहत उच्च न्यायालय मौलिक अधिकारों के साथ सामान्य विधि के उल्लंघन के कारण हुई क्षति की भरपाई के लिए भी रिट जारी कर सकता है।
- उच्चतम न्यायालय भारत के राज्य क्षेत्र में किसी भी व्यक्ति या सरकार के विरूद्ध रिट जारी कर सकताहै जबकि उच्च न्यायालय किसी व्यक्ति प्राधिकारी या सरकार के विरूद्ध तभी जारी कर सकता है, जब वह व्यक्ति या प्राधिकारी सरकार से संबंधित उच्च न्यायालय की राज्य क्षेत्रीय अधिकारिता के अंतर भौतिक रूप से अवस्थित है अर्थात् उच्च न्यायालय की अधिकारिता का विस्तार उस राज्य में हो।

आपात उद्घोषणा के दौरान मौलिक अधिकारों 4 का निलंबन-

- अनु. 352 के अंतर्गत राष्ट्रपति द्वारा राष्ट्रीय आपातकाल की उद्घोषणा किए जाने पर मौलिक अधिकारों के निलंबन के संदर्भ में निम्नलिखित दो प्रभाव हो सकते हैं-
- अनु. 358 के तहत आपात की उद्घोषणा के साथ ही अनु-19 स्वत: निलंबित हो जाएगा।
- यदि अनु 359 के तहत राष्ट्रपति आदेश देता है तो वैसी स्थिति में अनु 19 के साथ वैसे मौलिक अधिकार भी निलंबित होंगे जिनका वह अपने आदेश में उल्लेख करता हैं। किंतु अनु. 20 और अनु 21 या किसी भी स्थिति में निलंबित नहीं किए जाएँगे।

महत्वपूर्ण तथ्य -

- अनु 32 (3)के तहत संसद किन्ही अन्य न्यायालयों को भी संवैधानिक उपचारों के अधिकार के प्रयोग की शक्ति प्रदान कर सकती है।
- अनु 32 (4)के तहत यह उपबंध है कि प्रदत्त अधिकार संविधान के किसी उपबंध के द्वारा निलंबित नहीं किया जा सकता क्योंकि उच्चतम न्यायालय के निर्णय का यह अधिकार संविधान में संशोधन द्वारा भी नहीं बदले जा सकते हैं। यह विधान का बुनियादी ढ़ाचा से संबंधित है।
- अनु. 33 संसद् को यह अधिकार देता है कि वह सशस्त्र बलों और आवश्यक सेवाओं में कर्तव्यों के निर्वहन हेतु और अनुशासन बनाए रखने के लिए विधि द्वारा प्रदत्त मौलिक अधिकारों को सीमित करसकती है। इसी संदर्भ में सेना अधिनियम 1950, वायु सेना अधिनियम 1950 और नौसेना अधिनियम, 1957 पारित किए गए जिससे केंन्द्र सरकार को यह शक्ति प्रदान की गई है कि वह प्रतिरक्षा कर्मियों के मौलिक अधिकारों पर बंधन आरोपित करें। स्पष्ट है यह बंधन सेना में अनुशासन बनाए रखने और भारत की सुरक्षा के लिए अत्यंत आवश्यक है।
- अनु 34 के तहत जब किसी क्षेत्र में सेना कानून लागू है तो संसद विधि द्वारा संघ या राज्य की सेवा में किसी व्यक्ति की किसी ऐसे कार्य के संबंध में क्षति पूर्ति कर सकेगी जो उसने ऐसे क्षेत्र में व्यवस्था बनाए रखने के संबंध में किया है या सेना विधि के कार्यशील बने रहने के दौरान दिए गए किसी दंड के आदेश या किए गए किसी कार्य को विधि मान्य कर सकेगी।
- अनु 35 के तहत मौलिक अधिकारों को प्रभावित बनाने के लिए विधि निर्माण की शक्ति संघ की संसद को होगी न कि राज्य की विधायिकाओं को

संविधान के संरक्षक के रूप में उच्चतमन्यायालय :

- अनु 32 (1)के तहत उच्चतम न्यायालय को मौलिक अधिकारों के संरक्षक और संविधान की अंतिम व्याख्या का अधिकार प्रदान किया गया है। सामान्यत: मौलिक अधिकारों के उल्लंघन की

स्थिति में प्रभावित व्यक्ति ही उच्चतम न्यायालय में अभ्यावेदन (न्यायिक गुहार) कर सकता है, किंतु उच्चतम न्यायालय ने अपने निर्णय में निर्धारित किया है कि सामाजिक या लोकहित वादों में कोई भी व्यक्ति उच्चतम न्यायालय में अभ्यावेदनकर सकता है। इसे सुने जाने के अधिकार का विस्तार कहा जाता है जो लोकहितवाद के पक्ष में है।

☞ **अनुच्छेद 25 और 26 द्वारा प्रदत्त धार्मिक स्वतंत्रता के अधिकारों की वर्तमान स्थिति-**

- 'अनु- 25' अंत: करण और धर्म के आचरण तथा प्रचार कीस्वतंत्रता प्रदान करता है जबकि 'अनु 26' धार्मिक कार्यों के प्रबंधन की स्वतंत्रता का अधिकार प्रदान करता है। यह अधिकार भारत के नागरिकों के साथ अन्य व्यक्तियों के लिए भी है। न्यायालय ने अपने न्यायिक निर्णयों द्वारा अनुच्छेद 25 और अनुच्छेद 26 द्वारा प्रदत्त धार्मिक स्वतंत्रता के अधिकार को और अधिक विस्तृत कर दिया है। न्यायालय के अनुसार अनु 25 व अनु 26 में व्यक्ति को श्रद्धा और विश्वास को मानने और प्रचार करने के साथ वैसे सभी कर्मकांड या प्रथाएं मानने का अधिकार भी है जो उस संप्रदाय के अनुयायियों द्वारा धर्म का अंग मानी जाती है। न्यायालय के अनुसार धर्म विश्वास का विषय है और प्रत्येक धर्म की कुछ आस्थाएं और सिद्धांत होते हैं जिन्हें उस धर्म के अनुयायी आध्यात्मिक उन्नति के लिए सहायक मानते हैं। प्रत्येक धार्मिक संगठन को यह निश्चित करने की पूरी स्वतंत्रता है कि कौन से कर्मकांड और उत्सव उनके धर्म के सिद्धांतों के अनुसार आवश्यक है। यह निर्णय उच्चतम न्यायालय ने 1958 के हनीफ कुरैशी बनाम बिहार राज्य मामले में दिया था। 1959 के सरूप बनाम पंजाब राज्य मामले में न्यायालय ने यह निर्णय दिया कि. न्यायालय को यह निर्णय करने का अधिकार है कि कोई विशिष्ट कर्मकांड या पूजा पद्धति उस धर्म की मान्यताओं के अनुसार आवश्यक है या नहीं। वहीं 1954: रतीलाल बनाम मुंबई राज्य वाद में न्यायालय का निर्णय यह था कि यदि कोई विशिष्ट पद्धति लोक स्वास्थ्य या सदाचार के विरूद्ध है या
- धार्मिक पद्धति का प्रत्यक्ष अंग नहीं है और किसी सामाजिक, आर्थिक या राजनैतिक विनियमन करने वाली विधि का उल्लंघन करती है तो न्यायालय हस्तक्षेप कर सकता है।

न्यायालय द्वारा पंथनिरपेक्ष शब्द की व्याख्या-

- उच्चतम न्यायालयों के 9 न्यायाधीशों की एक पीठ ने पंथनिरपेक्ष शब्द को स्पष्ट करते हुए निम्नलिखित व्याख्या की-
- पंथनिरपेक्षता का अर्थ राज्य के धर्म के प्रति शत्रु का भाव नहीं है बल्कि इसका अर्थ यह है कि राज्य को विभिन्न धर्मों के बीच तटस्थ रहना चाहिए।
- प्रत्येक व्यक्ति को अपना धर्म मानने और उस पर आचरण करने की स्वतंत्रता है। अत: यह तर्क मान्य नहीं है कि यदि कोई व्यक्ति निष्ठावान हिंदु या निष्ठावान मुस्लिम है तो वह पंथनिरपेक्ष नहीं रह जाता है।
- पंथनिरपेक्ष शब्द के उद्देशिका में प्रयोग से अनु 25-30 और अनु 351 के उपबंधों का अभ्यारोहण नहीं हो सकता।
- शैक्षणिक पाठ्यक्रम में संस्कृत को वैकल्पिक विषयके रूप में मान्यता देना व अरबी, फारसी आदि को वह स्थान न देने से पंथनिरपेक्षता के सिद्धांतो का उल्लंघन नहीं होगा।
- यदि धर्म का उपयोग राजनैतिक प्रयोजनों के लिए, किया जाता है और राजनैतिक दल अपने राजनैतिक प्रयोजनों के लिए उसका आश्रय लेते हैं तो इससे राज्य की तटस्थता का उल्लंघन होगा। धर्म के आधार पर निर्वाचकों से अपील करना पंथनिरपेक्ष लोकतंत्र के विरूद्ध है। अत: राजनीति और धर्म को मिलाना नहीं चाहिए। यदि कोई राज्य सरकार ऐसा करती है. तो उसके विरूद्ध संविधान के 356 के अधीन कार्यवाही उचित होगी।
- पंथनिरपेक्षता को संविधान का आधारभूत लक्षण मानना चाहिए।

धर्म के प्रचार और धर्म परिवर्तन करने का अधिकार-

- अनु. 25 (1) के तहत लोक व्यवस्था, सदाचार और स्वास्थ्य तथा इस भाग के अन्य उपबंधों के अधीन रहते हुए सभी व्यक्तियों को अत: करण की स्वतंत्रता का और धर्म के अबाध रूप से मानने, आचरण करने और प्रचार करने का समान हक है। इस अनु में 'प्रचार' शब्द से कुछ इसाई नेताओं ने यह अर्थ निकाल लिया कि उन्हें अन्य धर्म के लोगों को किसी भी साधन का प्रयोग करके इसाई धर्म में परिवर्तित करने का अधिकार है। यह मान्यता जनवरी 1977 में स्टेनिस्लास बनाम मध्य प्रदेश मामले में उच्चतम न्यायालय के निर्णय केविपरीत है। इस मामले में एक इसाई पादरी ने मध्य उपर्युक्त तथ्यों से स्पष्ट है कि उच्चतम न्यायालय ने प्रदेश के एक अधिनियम को इस आधार पर अविधि इसाई धर्म के लोगों द्वारा उठाए गए मामलों को अस्वीकार मान्य कराने का प्रयत्न किया था कि वह अभि करते हुए मध्य प्रदेश और उड़ीसा के अधिनियम की नियम किसी व्यक्ति को बल, कपट या लोभ मेधानिकता की पुष्टि की। में परिवर्तन करने या ऐसा करने के प्रयत्न को दंडनीय अपराध मनाता था। उस समय तक उड़ीसा ने इसी प्रकार का अधिनियम पहले ही पारित कर दिया था जिसमें लोभ के स्थान पर फुसलाना शब्द का प्रयोग था। उसकी संवैधानिकता को इसाई मत के लोगों द्वारा चुनौती दी गई। उच्चतम न्यायालय दोनों अधिनियमों पर एक साथ विचार कर इसाई मत के लोगों के तर्कों को पूर्णत: अमान्य ठहराया। उच्चतम न्यायालय ने अपने इस निर्णय के जरिए निम्नलिखित सिद्धांत प्रतिपादित किए जो संविधान के अंतर्गत: भारत के सभी न्यायालयों पर लागू होंगे-

- अनु. 25 (1) में 'प्रचार' का अधिकार प्रत्येक धर्म के हर सदस्य को उपदेशों के द्वारा अपने धर्म के सिद्धांतों का प्रसार करने या फैलाने का अधिकार देता है. किंतु इसमें दूसरे के धर्म परिवर्तन करने का अधिकार कार नहीं है क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति को इसी उपबंध द्वारा अत:करण की स्वतंत्रता है।
- अनु. 25 (1) के तहत प्रत्येक मनुष्य के अंत:करण की समान स्वतंत्रता का अर्थ यह है कि वह अपनी इच्छा अनुसार कोई भी धर्म चुन सकता है और उसमें आस्था रख सकता है उसे बल, कपट या लोभ से या फुसलाकर किसी अन्य धर्म में परिवर्तन नहीं किया जा सकता।
- न्यायालय अपने निर्णय में यह माना कि प्रचार करने के अधिकार के अंतर्गत किसी विशिष्ट धर्म को प्रत्येक साधन द्वारा प्रचार करने का अधिकार है। जिसमें संपरिवर्तन भी शामिल है। फिर भी राज्य का यह अधिकार और कर्तव्य है कि यदि संपरिवर्तन का क्रियाकलाप लोक व्यवस्था सदाचार या स्वास्थ्य के विरुद्ध है तो वह हस्तेक्षप करेगा क्योंकि अनु- 25 (1) में धर्म की स्वतंत्रता लोक व्यवस्था, सदाचार या स्वास्थ्य के अधीन है।

  उपर्युक्त तथ्यों से यह स्पष्ट है कि उच्चतम न्यायलय ने इसाई धर्म के लोगों द्वारा उठाए गए मामले को अस्वीकार करते हुए मध्य प्रदेश एवं उड़ीसा के अधिनियम की संवैधानिक वैधता की पुष्टि की।

संविधान में अल्पसंख्यकों के लिए प्रावधान-

- संविधान में अनु 29 और अनु 30 अलकों के लिए विशेष प्रावधान करता है। 42वें संविधान संशोधन द्वारा उद्देशिका में पंथनिरपेक्ष शब्द को अंत: स्थापित कर इसे और महत्ता प्रदान की गई है। अल्पसंख्यकों के लिए रक्षा के विभिन्न उपबंधों की विवेचना अनु. 25-30 में की गई है किंतु यदि कोई अल्पसंख्यक वर्ग पंथनिरपेक्षता के नाम पर कोई और लाभ चाहता है जो इन उपबंधों में नहीं है या सत्तारूढ़ दल राजनैतिक कारणों से उनकी बात मान लेता है तो यह सांप्रदायिकता को प्रवेश देना होगा। ऐसे में यदि सरकार किसी लोक पद की नियुक्ति का आधार
- भार्मिक अल्पसंख्यक को बनाती है तो यह अनु- 16 (2) के अंतर्गत अन्य समुदायों के मौलिक अधिकारों का उल्लंघन होगा क्योंकि सभी समुदायों को यह अधिकार है कि धर्म या इसी प्रकार के किसी अन्य आधार पर उनके साथ कोई विभेद न किया जाए। राष्ट्र के लिए अल्पसंख्यकों के साथ बहुसंख्यकों का विश्वास भी उतना ही आवश्यक है। हालांकि, 1991 के सेट स्टीफेंस कॉलेज बनाम दिल्ली विश्वविद्यालय मामले में उच्चतम न्यायालय ने अपने निर्णय में यह माना कि अल्पसंख्यक शिक्षा संस्था को अपने समुदाय के विद्यार्थियों के लिए 50% तक स्थान आरक्षित करने की शक्ति है। वास्तव में भारतीय संविधान ने अल्पसंख्यकों को धार्मिक और सांस्कृतिक रक्षा के उपाय प्रदान किए हैं ताकि उन्हें न्याय विचार अभिव्यक्ति विश्वास, ध में और उपासना की स्वतंत्रता सुनिश्चित हो सके। किंतु यदि कोई अल्पसंख्यक वर्ग संविधान में दिए गए प्रावधानों से अधिक पाने की मांग करता रहता है तो इससे उनकी अलगाववादी प्रवृत्तियों में वृद्धि होगी और भारत कभी भी एक ऐसा अखंड राष्ट्र नहीं बन पाएगा जिसका संविधान की उद्देशिका में उद्देश्य रखा गया।

मूल अधिकारों की आलोचना

- मूल अधिकारों को निम्नलिखित प्रकार से आलोचना की जाती हैं इसे एक आरेख द्वारा प्रदर्शित किया गया है-

❑❑❑

विगत वर्षों में मौलिक अधिकार से पूछे गए प्रश्न

Q. संपत्ति के अधिकार के वर्तमान रूप का आलोचनात्मक मूल्यांकन कीजिए।

Critically evaluate the present form of Right to Property- (BPSC, 43rd)

Q. भारतीय संविधान द्वारा प्रदत्त मौलिक अधिकारों का वर्णन कीजिए किस प्रकार अनुच्छेद 21 की न्याय की व्याख्या अपने जीवन के अधिकार के विषय क्षेत्र का विस्तार किया है।

Describe the Fundamental Rights guaranteed by the Indian Constituiton. How Article 21's interpretation of justice has expanded its cope of Right to Life. (BPSC, 56-59th)

Q. संविधान और संवैधानिकता के बीच क्या अंतर है? भारत के सुप्रीम कोर्ट द्वारा अनुमोदित मूल संरचना के सिद्धांत के बारे में गंभीरता से जांच करें।

What is the difference between Constitution and Constitutionalism Examine seriously about the principle of basic structure approved by the Supreme Court of India? (BPSC, 63rd)

Q. भारतीय संविधान अपनी प्रस्तावना में भारत को एक समाजवादी धर्मनिरपेक्ष लोकतांत्रिक गणराज्य घोषित करता है। इस मौलिक कर्त्तव्य को क्रियान्वित करने के लिए कौन से संवैधानिक उपबंध किए गए हैं?

The Constituion of India, in its Preamble, Declares India to be a Socialist, Secular, Democratic, Republic. What constitutional provisions have been made to implement this fundamental act? (BPSC, 64th)

Q. क्या आप इस व्यक्तव्य से सहमत है कि हमारे संविधान ने एक हाथ से मौलिक अधिकार दिए है, किन्तु दूसरे हाथ से उन्हें वापस ले लिया है? 65th BPSC 2019

संभावित प्रश्न

Q. भारतीय संविधान में निहित समानता के अधिकार एवं धर्म के स्वतंत्रता का अधिकार के बावजूद कुछ धार्मिक स्थलों पर महिलाओं का प्रवेश निषेध किया गया है। इसकी विवेचना करते हुए बताए की क्या यह दोनों एक दूसरे के पूरक है या एक दूसरे के विपरीत है।

Q. सोशल मीडिया के दौर में मौलिक अधिकारों की किस प्रकार बल मिला है? चर्चा कीजिए।

Q. निवारक निरोध एवं दंडात्मक निरोध में अंतर स्पष्ट कीजिए।

Q. संविधान के मूल ढांचे की विवेचना करते हुए बताए की मूल अधिकारों में संशोधन से संबंधित विवाद क्या है?

Q. सरकारों और निजी कंपनियों द्वारा व्यक्ति के पहचान को सार्वजानिक करना किस प्रकार मौलिक अधिकार का उल्लंघन करता है? व्याख्या कीजिए।

Q. नीति निर्देशक तत्व किस प्रकार मौलिक अधिकारों की रक्षा करता है?

Q. मौलिक अधिकारों की आलोचनात्मक व्याख्या कीजिए।